Con. 3. 4.6.47
750

अंक 4
संख्या 6

सोमवार
21 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	परिचय पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	1
2.	जनरल आंगसान तथा उनके साथियों की हत्या पर शोक-प्रकाश	1
3.	अनुकरणीय प्रान्तीय विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट	2
4.	संघ-विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट	47
5.	परिशिष्ट 'क'	57
6.	परिशिष्ट 'ख'	89

भारतीय विधान-परिषद्

सोमवार, 21 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि परिषद के तीन सदस्य यहां मौजूद हैं जिन्होंने अभी रजिस्टर पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं। वे कृपया हस्ताक्षर करें।

निम्नलिखित सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

1. डा. एम.सी. मुकर्जी
2. मिस्टर एफ.आर. एन्थानी
3. कुमारराजा सर एम.ए. मुत्तिया चेट्टियर

जनरल आंगसान तथा उनके साथियों की हत्या पर शोक प्रकाश

***अध्यक्षः** सभा को यह समाचार पाकर बड़ी ही वेदना हुई है कि परसों जनरल आंगसान और उनके साथियों पर बड़े ही अमानुषिक ढंग से हमला किया गया जिसके परिणामस्वरूप बड़ी ही दर्दनाक हालत में उन लोगों की मृत्यु हो गई। इस समाचार से भारतीयों को बड़ा ही सदमा पहुंचा है और विशेषतया इसलिये कि बर्मा के साथ हमारे सम्बन्ध, उसके भारत से पृथक कर दिये जाने के बाद भी, बड़े ही मैत्रीपूर्ण थे। जनरल आंगसान उन व्यक्तियों में थे जिन्होंने बर्मा को स्वतंत्रता के द्वार पर पहुंचा दिया था। उनकी और उनके साथियों की निर्मम हत्या उनके ही देशवासियों के हाथ से हो, यह बड़ी ही दुखद बात है।

मैं नहीं जानता कि संसार कब इस तथ्य को समझ पायेगा कि हिंसा से और विशेषतः इस प्रकार की हिंसा से संसार की कोई भी समस्या कभी नहीं सुलझाई जा सकती। यदि इस हत्या के पीछे कोई गहरा षडयन्त्र है तो फिर मुझे डर है कि बर्मा बड़े ही संकट के काल से गुजर रहा है। परन्तु हमें आशा है कि जो सरकार वहां जबर्दस्त जनमत के समर्थन से अधिकारारूढ़ हुई है वह स्थिति पर काबू

*इस चिन्ह का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

पाने में कामयाब होगी और बर्मा के लोग उस स्वतंत्रता के वरदानों का उपयोग करेंगे जिसे लाने का बड़ा श्रेय इन बलिदान हो जाने वाले व्यक्तियों को ही है।

आशा है कि सभा मुझे इसकी अनुमति देगी कि मैं अपने देशवासियों की ओर से बर्मावासियों के प्रति, उनकी सरकार के प्रति तथा शोकाकुल परिवारों के प्रति अपना हार्दिक दु:ख और शोक प्रकट करूं। आशा है माननीय सदस्य अपने स्थान पर खड़े होकर स्वीकृति सूचित करेंगे।

(सभी सदस्यों ने खड़े होकर इसे स्वीकार किया।)

***श्री गोकुलभाई भट्ट** (पूर्वी राजपूताना राज्य समूह): अध्यक्ष महोदय, आपकी आज्ञा हो तो एक-दो प्रश्न पूछना चाहता हूं। इस असेम्बली की कार्यवाही इस समय कितने दिन और चलेगी? क्या अगस्त में फिर से हमें यहां इकट्ठा होना पड़ेगा? कार्यक्रम की सुविधा के लिये यह जानकारी चाहता हूं।

अध्यक्ष: मैं आशा करता हूं कि असेम्बली की कार्यवाही इस महीने के अन्दर-अन्दर ही खत्म हो जायेगी; क्योंकि हमारे सामने इस कमेटी की रिपोर्ट के बाद एक दूसरी कमेटी की रिपोर्ट है और उस पर असेम्बली का विचार जब पूरा हो जायेगा तो जो सबसे बड़ा काम हमारे सामने है, जिसमें सबसे ज्यादा वक्त लगने वाला है वह खत्म हो जायेगा। उसके अलावा शायद एक या दो रिजोल्यूशन भी आने वाले हैं। मगर मैं समझता हूं कि उनमें ज्यादा वक्त नहीं लगेगा। इसलिये मैं समझता हूं कि इस महीने के आखिर तक इस बैठक की कार्यवाही खत्म हो जायेगी। मुमकिन है कि 15 अगस्त को फिर मेम्बरों को यहां आना पड़े।

अनुकरणीय प्रान्तीय विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट–(जारी)

खंड 22

***अध्यक्ष:** जिस खण्ड पर हम अभी उस दिन बहस कर रहे थे उस पर अब विचार शुरू करेंगे। संशोधन आ चुके हैं और अब प्रस्ताव और संशोधनों पर बहस हो सकती है।

मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या ऐसा भी संशोधन है जिसकी सूचना तो दी जा चुकी है पर अभी पेश नहीं किया गया है। मेरा अपना ख्याल तो यह है कि सभी संशोधन पेश हो चुके हैं।

हां, श्री अणे, आप उस पर बोलना चाहते थे?

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, खण्ड 22 के सम्बन्ध में श्री सन्तानम् ने एक दूसरा संशोधन नं. 2 रखा है और उस संशोधन के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता था कि वह अनावश्यक है। वह इस बात का निश्चय कर लेना चाहते हैं कि कोई भी नियम जो यहां बनेंगे उनसे वयस्क मताधिकार सम्बन्धी प्रारम्भिक सिद्धान्त को, जो स्वीकार किया जा चुका है, कोई ठेस न पहुंचेगी। यह सर्व-विदित सिद्धान्त है कि नियम-निर्माण सम्बन्धी अधिकारों के अनुसार नियम निर्माताओं को यह बात सदा ध्यान में रखनी पड़ती है कि नियमों में कोई बात ऐसी न आ जाये जो उन सिद्धान्तों के विपरीत हो जो विधान में दर्ज किये जा चुके हैं। इस बात को देखते हुये तथा इस तथ्य को देखते हुये कि विधान में वयस्क मताधिकार का स्पष्ट आदेश आ चुका है, उनका दूसरा संशोधन मुझे अनावश्यक जान पड़ता है।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): सर एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा उठाई हुई आपत्ति के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि मैंने एक संशोधन की सूचना दी है और उस संशोधन पर भी इसके साथ ही विचार किया जा सकता है। वह नई पूरक सूची में है। मैं यह बताना चाहता हूं कि प्रथम चुनाव के सम्बन्ध में कोई व्यवस्था अभी नहीं हुई है। जब तक कि कुछ ऐसी व्यवस्था न हो उस खण्ड को लागू करना कठिन होगा और इसीलिये मैंने यह संशोधन रखा है:

''खंड 22 के प्रारम्भ में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'इस विधान के अन्तर्गत होने वाले प्रान्तीय व्यवस्थापिका के प्रथम चुनाव के लिये निर्वाचन-क्षेत्र, मतदाताओं की योग्यता और अन्य बातें वैसी ही होंगी जैसी कि उस विधान की सूची में निर्धारित हों'।''

और तब खण्ड का स्वरूप वैसा ही हो जायेगा जैसा दिया गया है और इसके बाद मेरा संशोधन आयेगा। मैं यह संशोधन पेश करता हूं। मैं नहीं समझता कि इस सम्बन्ध में और भी कोई बात स्पष्ट होनी बाकी है।

***अध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य खण्ड या प्रस्तावित संशोधनों पर कुछ बोलना चाहते हैं। मैं संशोधनों पर मत लेता हूं। श्री सन्तानम् का संशोधन यह है:

''खंड 22 के प्रारम्भ में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'इस विधान के अन्तर्गत होने वाले प्रान्तीय व्यवस्थापिका के प्रथम चुनाव के लिये निर्वाचन-क्षेत्र, मतदाताओं की योग्यता और अन्य बातें वैसी ही होंगी जैसी कि इस विधान की सूची में निर्धारित हों'।''

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बईः जनरल): मैं श्री सन्तानम् तथा सेठ गोविन्ददास दोनों के ही संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** मैं श्री संतानम् के संशोधन पर मत लेता हूं।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री संतानम् का दूसरा संशोधन यों हैः

''खंड 22 में 'from time to time' शब्दों के बाद 'In accordance with the procedure for the amendments the Provincial Constitution'.''

यह संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री संतानम् का एक दूसरा संशोधन है जो यों हैः

''खंड 22 के मद (ख) में 'मताधिकार के लिये योग्यता' शब्दों की जगह ये शब्द रखे जायेंः

'व्यक्तिगत अयोग्यता (जो जन्म, जाति, धर्म तथा सम्प्रदाय जन्य नहीं होगी) के कारण और निवास न करने के कारण वयस्क मताधिकार पर प्रतिबन्ध।' ''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री मुंशी ने एक संशोधन रखा है जो यों हैः

''खंड 22 का दूसरा आदेश हटा दिया जाये।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** एक दूसरा संशोधन सेठ गोविन्ददास ने रखा है जो यों हैः

''खंड 22 में दूसरे आदेश के बाद निम्नलिखित नवीन आदेशमूलक व्यवस्था जोड़ी जायेः

'खंड 22 में क से झ तक की सारी आदेश मूलक व्यवस्थायें, उन सिद्धांतों के आधार पर होंगी तथा उन आदेशों के अनुरूप होंगी जो साथ

नत्थी की हुई सूची में निर्धारित किये गये हैं ताकि इन मामलों में सारे भारतीय राज्य-संघ में एकरूपता रहे'।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधित खंड पर आपकी राय लेता हूं।

खंड 22 संशोधित रूप में पास हुआ।

खण्ड 23

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान् अब मैं खंड 23 उपस्थित करता हूं:

''(1) यदि किसी समय, जबकि प्रान्तीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन न हो रहा हो, न गवर्नर को विश्वास हो कि ऐसी परिस्थिति उपस्थित है जिसमें तुरन्त कार्यवाही करने की आवश्यकता है तो वह ऐसे आर्डिनेंसों को लागू कर सकता है जिन्हें वह उस परिस्थिति में आवश्यक समझे।

(2) इस खंड के अधीन लागू किये हुये किसी आर्डिनेंस का वही बल और प्रभाव होगा जो प्रान्तीय व्यवस्थापिका के किसी ऐसे एक्ट का होगा जिसे गवर्नर ने स्वीकार कर लिया हो, लेकिन ऐसा हर एक आर्डिनेंसः

'(क) प्रान्तीय व्यवस्थापिका के सामने रखा जायेगा और प्रान्तीय व्यवस्थापिका के पुनर्सम्मिलित होने के 6 सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या अगर इस समय के पहले व्यवस्थापिका उसके विरुद्ध प्रस्तावों को पास कर दे तो ऐसे प्रस्तावों में से दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में नहीं रहेगा, और

(ख) गवर्नर उसे किसी भी समय वापस ले सकता है।'

(3) यदि इस खंड के अधीन कोई आर्डिनेंस ऐसा आदेश रखे या ऐसी सीमा तक आदेश रखे कि इसे प्रान्तीय व्यवस्थापिका उस विधान के अधीन कानून बनाने में असमर्थ हो, तो वह रद्द समझा जायेगा।''

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

आर्डिनेंस बनाने के अधिकार की बड़ी आलोचना हुई है पर दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर यह अधिकर आवश्यक मालूम पड़ता है। ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है कि किसी कानून का तुरंत लागू करना अत्यावश्यक हो जाये और प्रांतीय व्यवस्थापिका की बैठक बुलाने का समय न रहे।

मैं नहीं समझता कि इस खंड के सम्बन्ध में कोई संशोधन रखा गया है। सभा की स्वीकृति के लिये मैं यह खंड उपस्थित करता हूं।

(सर्वश्री अजीत प्रसाद जैन, एच.वी. पातस्कर, आर.के. सिधवा, शिब्बनलाल सक्सेना तथा अनन्तशयनम् आयंगर ने अपने संशोधन नहीं पेश किये।)

***मि. नजीरुद्दीन अहमद** (बंगाल: मुस्लिम): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड 23 के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ा जाये:

''24. उन सभी विषयों को, जो, उक्त खंडों से अभिन्न हों या उनके अनुवर्ती हों, उक्त खंडों का अंश समझा जायेगा और उनमें ही शामिल किया जायेगा।''

श्रीमान् मेरा कहना है कि विधान का मसविदा बनाते समय परिभाषिक कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं और उनके निराकरण के लिये उपरोक्त खंड आवश्यक है। सभा ने मूल रिपोर्ट पर बहुसंख्यक संशोधन स्वीकार किये हैं और यह संभव है कि यत्र तत्र कुछ कमियां रह गई हों जो अन्तिम रूप से विधान बनाते समय दृष्टि में आयें। इसीलिये मैं इस संशोधन को स्वीकार करने का प्रस्ताव रखता हूं। ताकि अगर ऐसी कानूनी खामी रह गई हो तो उसे दूर कर सकें।

***अध्यक्ष:** मि. नजीरुद्दीन, मेरा ख्याल है कि आपका संशोधन वस्तुत: संशोधन नहीं है बल्कि यह एक स्वतंत्र खंड है। अच्छा होगा कि हम पहले खंड 23 को निबटा लें और फिर इस नये खंड पर विचार करें।

खंड 23 पर कोई संशोधन नहीं आया है। यदि कोई सदस्य इस पर कुछ कहना चाहते हों तो अब बोल सकते हैं।

(कोई सदस्य बोलने के लिये नहीं उठा।)

अब मैं खण्ड पर सभा का मत लेता हूं। खंड यों है:

''23 (1) यदि किसी समय जब कि प्रान्तीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन न हो रहा हो, गवर्नर को विश्वास हो कि ऐसी परिस्थिति उपस्थित

है जिसमें तुरन्त कार्यवाही करने की आवश्यकता है तो वह ऐसे आर्डिनेंसों को लागू कर सकता है जिन्हें वह उस परिस्थिति में आवश्यक समझे।

(2) इस खंड के अधीन लागू किये हुये किसी आर्डिनेंस का वही बल और प्रभाव होगा जो प्रान्तीय व्यवस्थापिका के किसी ऐसे एक्ट का होगा जिसे गवर्नर ने स्वीकार कर लिया हो, लेकिन ऐसा ही एक आर्डिनेंसः

'(क) प्रान्तीय व्यवस्थापिका के सामने रखा जायेगा और प्रान्तीय व्यवस्थापिका के पुनर्सम्मिलित होने के 6 सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या अगर इस समय के पहले व्यवस्थापिका उसके विरुद्ध प्रस्तावों को पास कर दे तो ऐसे प्रस्तावों में से दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में नहीं रहेगा, और

(ख) गवर्नर उसे किसी भी समय वापस ले सकता है।'

(3) यदि इस खंड के अधीन कोई आर्डिनेंस ऐसा आदेश रखे या ऐसी सीमा तक आदेश रखे कि इसे प्रान्तीय व्यवस्थापिका उस विधान के अधीन कानून बनाने में असमर्थ हो तो वह रद्द समझा जायेगा।''

खंड स्वीकृत हुआ।

अध्यक्षः मि. नजीरुद्दीन अहमद अब अपना खंड पेश करेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमदः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड 23 के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ा जायेः

''24. उन सभी विषयों को जो उक्त खंडों से अभिन्न हों या उनके अनुवर्त्ती हों, उक्त खंडों का अंश समझा जायेगा और उनमें ही शामिल किया जायेगा।''

श्रीमान् मेरा यह कहना है कि मसविदा तैयार करते समय जो कानूनी अड़चनें आयेंगी उनको दूर करने के लिये यह खंड आवश्यक है। हमने सभा में कई नये संशोधन रखे हैं और शायद उनके लिये सूचना का भी काफी समय नहीं रहा है।

[श्री नजीरूद्दीन अहमद]

इसलिये यह बहुत सम्भव है कि यत्र तत्र कुछ कमियां रह गई हों। मेरा मतलब है ऐसी कमियों या कानूनी अड़चनों से जो ऐसे मौकों पर अज्ञात रूप से आ जाती हैं। इसलिये अन्तिम रूप से मसविदा तैयार करते समय यह बात उठाई जा सकती है कि अमुक बातें यानी वह बातें जो स्वीकृत संशोधनों से मिलती जुलती हों या उसके अनुवर्ती हों रिपोर्ट में शामिल करने के लिये इरादे से नहीं रखी गयी हैं। यही कारण है कि इस नवीन खंड को रखने का प्रस्ताव कर रहा हूं। मुझे ऐसी कोई कमी तो नहीं दिखती फिर भी मैंने यह खंड इसलिये रखा है कि अगर कोई कमी रह गयी हो तो इससे विधान निर्माताओं को सहायता मिल सके। इन चंद शब्दों के साथ मैं उसे सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

अध्यक्षः एक नवीन खंड, खंड 24 को यहां जोड़ने का प्रस्ताव रखा गया है। इस अतिरिक्त खंड का क्या प्रभाव होगा यह मैं खुद तो नहीं समझ पाया हूं। यदि कोई सदस्य इस पर कुछ बोलना चाहते हों तो मैं अनुगृहीत होऊंगा अगर वे इस सम्बन्ध में हमें कुछ प्रकाश दें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): मैं नहीं समझता कि इस तरह के नवीन खंड की कोई आवश्यकता है क्योंकि यहां हम केवल स्थूल सिद्धांतों को ही स्वीकार कर रहे हैं। यह स्वाभाविक है कि जब अन्तिम रूप से विधान का मसविदा तैयार किया जायेगा तो उसमें ऐसी बातों को जो अधीनस्थ अभिन्न, पूरक, स्वरूप और परिणामजन्य हों, रखना ही होगा। प्रस्तावित नवीन खंड बिलकुल अस्पष्ट है। यदि हम इसे रखते हैं तो परिस्थिति संभालने के लिये यह काफी नहीं है और अगर नहीं रखते हैं तो हमारा कुछ नुकसान नहीं होता है। हर हालत में इस पर अभी विचार करने की या मत लेने की जरूरत नहीं है।

***अध्यक्षः** चूंकि और कोई वक्ता नहीं है मैं इस प्रस्ताव पर मत लेता हूं। प्रस्ताव यह है कि:

निम्नलिखित नया खंड, खंड 23 के बाद जोड़ा जाये:

''24. उन सभी विषयों को जो उक्त खंडों से अभिन्न हों या उनके अनुवर्ती हों उक्त खंडों का अंश समझा जायेगा और उनमें ही शामिल किया जायेगा।''

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री संतानम् ने एक अतिरिक्त खंड पेश करने की सूचना दी है। क्या श्री संतानम् उसे पेश करेंगे?

***श्री के. संतानम्,** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है किः

''खंड 23 के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ा जायेः

'24. एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांत के गवर्नर को अधिकार होगा कि वह अपने विवेक से धारा-सभा द्वारा स्वीकृत बिल पुनर्विचारार्थ लौटा दे और उसमें संशोधनों का सुझाव दे। अगर वह बिल धारा-सभा द्वारा पूर्ण बहुमत से संशोधन या बिना संशोधन के साथ पुनः स्वीकृत हो जाये तो गवर्नर उस पर अपनी स्वीकृति देगा'।''

इस संशोधन में बहुत कुछ सार है। अनुकरणीय विधान के वर्तमान मसविदा के अनुसार अगर धारा-सभा येन-केन प्रकारेण या बहुत ही साधारण बहुमत से भी कोई बिल पास करती है तो वह तुरंत कानून बन जायेगा क्योंकि गवर्नर को कानून रद्द करने का या ऐसा अन्य विशेषाधिकार नहीं प्राप्त है। श्रीमान्, मैं यह नहीं चाहता कि गवर्नर को विशेषाधिकार दिये जायें। मैं चाहता हूं कि प्रत्येक प्रांत को पूर्ण उत्तरदायी तथा स्वायत्तपूर्ण शासन प्राप्त हो। पर मेरा यह मत अवश्य है कि गवर्नर को यह अधिकार होना चाहिये कि वह धारा-सभा द्वारा स्वीकृत किसी बिल को पुनर्विचारार्थ लौटा दे। पुनर्विचार के बाद भी अगर व्यवस्थापिका उस बिल को जबरदस्त बहुमत से स्वीकार करे तो गवर्नर को उसे रद्द करने का अधिकार न होगा और उस हालत में उस बिल पर उसे अपनी स्वीकृति देनी होगी।

मैंने यह अधिकार केवल उन्हीं प्रांतों के गर्वनरों को दिया है जहां की व्यवस्थापिका एक सभात्मक है, क्योंकि जहां व्यवस्थापिका द्विसभात्मक है वहां ऊपर वाली सभा पुनर्विचार का काम करेगी ही और फिर इस अधिकार का उपयोग मैंने गवर्नर के विवेक पर छोड़ा है। अवश्य ही जो मंत्रिमंडल नाममात्र के बहुमत से किसी बिल को जल्दी-जल्दी पास करा लेता है, वह उस बिल पर पुनर्विचार की कभी सिफारिश न करेगा। इसलिये यह अधिकार गवर्नर के विवेक पर छोड़ा गया है।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगालः जनरल): श्रीमान्, मुझे तो यह शंका है कि इस संशोधन से गणतन्त्र के मूलभूत सिद्धान्त पर ही कुठाराघात होता है जिसके

[पं. लक्ष्मीकांत मैत्र]

आधार पर हमारा विधान बनने वाला है। आखिर श्री संतानम् के संशोधन में मूल बात क्या है? क्या उनका यह कहना है कि एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांत में अगर नाममात्र के बहुमत से कोई बिल पास हो जाये तो उस सूरत में गवर्नर को यह विशेषाधिकार होना चाहिये कि वह उसे व्यवस्थापिका के पास इस सुझाव के साथ लौटा दे कि वह उस पर पुनर्विचार करे और तब फैसला करे? मैं सभा से पूछता हूं कि इसका नतीजा क्या होगा? मेरी राय में तो इसका एकमात्र अवश्यंभावी परिणाम यह होगा कि गवर्नर मंत्रिमंडल का विरोधी हो जायेगा और उसमें तथा लोकप्रिय मंत्रिमंडल के बीच प्रत्यक्ष संघर्ष चल पड़ेगा। ऐसी स्थिति लाने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं दिखाई देती। दूसरी ओर अगर कोई बिल जल्दबाजी में बिना पूरी तरह विचार किये पास ही कर दिया गया है तो व्यवस्थापिका को यह अधिकार तो है ही कि वह उसे अपने दूसरे अधिवेशन में रद्द कर दे या संशोधित कर दे। अगर सचमुच वह बिना पूरी तरह सोचे विचारे पास किया गया है तो इसलिये श्रीमान्, मैं तो यह अनुभव करता हूं कि गवर्नर को ऐसा अधिकार देने से व्यवस्थापिका के दायित्व और स्वातंत्र्य पर आघात पहुंचेगा। इससे गवर्नर और मंत्रिमंडल के बीच अनावश्यक संघर्ष उपस्थित हो जायेगा और मैं ऐसा समझता हूं कि उस प्रस्ताव का समर्थन न करना चाहिये।

***श्री एन.वी. गाडगिल** (बम्बईः जनरल): श्रीमान् मैं एक सुझाव देना चाहता हूं जिसे यहां और अभी शामिल करने की जरूरत नहीं है, पर बाद में अनुकूल अवसर पर उस पर विचार किया जा सकता है। मेरा सुझाव है कि गवर्नर द्वारा किसी भी बिल के संशोधन पर बिना संशोधन के पुनर्विचारार्थ लौटाने की एक अवधि रहनी चाहिये और इस अवधि के भीतर वह बिल को वापस न भेजे तो यह समझ लेना चाहिये कि गवर्नर ने उस बिल पर अपनी स्वीकृति दे दी है। अमेरिकन विधान में ऐसी व्यवस्था है और यहां भी होनी चाहिये।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्रः** अवधि निर्धारित करने के साथ-साथ क्या श्री गाडगिल इस सिद्धांत को स्वीकार करते हैं कि गवर्नर को व्यवस्थापिका के निर्णय पर पुनर्विचार करने का अधिकार हो।

***श्री अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, मैं श्री संतानम् के संशोधन को बड़ा वांछनीय समझता हूं। श्री गाडगिल ने संशोधन का समर्थन किया है और मैं नहीं समझता कि मेरे मित्र पं. मैत्र को उनके इस इरादे पर कोई सन्देह क्यों हो। वह सिद्धांत

स्वीकार करके ही अवधि निर्धारित करने की बात कहते हैं। अमेरिकन विधान में 16 दिन की अवधि रखी गई है। एक अवधि अवश्य निर्धारित होनी चाहिये जिसके भीतर गवर्नर बिल पर विचार कर उसे पुनर्विचारार्थ व्यवस्थापिका के पास जरूर भेज दे। ऐसा हो सकता है कि सदस्य काफी संख्या में न उपस्थित रहे हों और अल्पसंख्यक सम्बंधी कोई गंभीर मसला या अन्य कोई गंभीर प्रश्न उपस्थित रहा हो जिस पर, बजाय इसके कि उसे जल्दी-बाजी में पास कर दिया जाये, अधिक विचार करना जरूरी रहा हो। गवर्नर को हर समय सब बातों का ध्यान रखना होगा। ऐसी बात नहीं है कि हर समय वह लोकप्रिय मंत्रिमंडल के कामों में हस्तक्षेप करता रहेगा। वह सावधान रहेगा। वह समय-समय पर मंत्रिमंडल की बैठकों का सभापतित्व करेगा और हितकर प्रभाव रखेगा। बावजूद इन सारी बातें के कभी-कभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है कि सभा का कोई वर्ग यह चाहता हो कि कोई बिल जल्दी-जल्दी पास कर लिया जाये। ऐसी अवस्था में गवर्नर के हाथ में यह नियंत्रण रहने दीजिये कि वह बिल को व्यवस्थापिका के पास पुनर्विचारार्थ वापस कर दे। गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में भी ऐसी व्यवस्था है। मैं अपने मित्र पं. मैत्र को विश्वास दिला सकता हूं कि एक लोकप्रिय गवर्नर सिवाय किसी खास गंभीर मामले के और सभी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): श्रीमान्, मैं संशोधन का समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं। मान लीजिये कि बिल गवर्नर की स्वीकृति के लिये उनके पास भेजा जाता है पर वे उससे सहमत नहीं है। उस सूरत में क्या होगा? साधारणत: गवर्नर जो वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होगा, व्यवस्थापिका द्वारा स्वीकृत किसी भी व्यवस्था में हस्तक्षेप नहीं करेगा पर अगर वह बिल से असन्तुष्ट है तो क्या उस हालत में उसे अपनी आत्मा के विरुद्ध उस पर स्वीकृति देनी होगी। या वह उसे अपने संशोधन के साथ व्यवस्थापिका को लौटा देगा या उसे अस्वीकृत कर देगा। अंग्रेजी विधान में यह व्यवस्था है कि लोक-सभा में स्वीकृत हो जाने के बाद बिल लार्ड-सभा में जाता है और वहां से फिर सम्राट के पास उनकी स्वीकृति के लिये भेजा जाता है। सम्राट को यद्यपि बिल को अस्वीकृत कर देने का अधिकार है और उस हालत में वह फिर दोनों सभाओं को भेज दिया जाता है; पर होता यही है कि सम्राट प्राय: सदा ही बिल पर स्वीकृति देते हैं। और अगर बिना किसी संशोधन के बिल फिर दोनों सभाओं में पास हो जाता है और वह सम्राट के पास भेजा जाता है तो उनको उस

[मि. तजम्मुल हुसैन]

पर स्वीकृति देनी ही होगी या सिंहासन त्याग करना होगा। यही बात यहां भी होनी चाहिये। गवर्नर को यह अधिकार दिया जाता है कि व्यवस्थापिका द्वारा स्वीकृत बिल पर स्वीकृति देना उनके विवेक पर है अथवा अगर वह बिल को अपने संशोधन के साथ वापस कर देता है तो व्यवस्थापिका गवर्नर के सुझाव के आधार पर उस पर विचार कर सकती है। यदि व्यवस्थापिका बिल को उस मौलिक रूप में पुनः पास कर देती है तो गवर्नर को उस पर स्वीकृति देनी होगी या उसे पदत्याग करना होगा। इसलिये मैं संशोधन का समर्थन करता हूं कि गवर्नर को एक मौका मिलना चाहिये और केवल काठ की मूर्ति की तरह उसे रहना चाहिये।

***श्री रामनारायण सिंह** (बिहार: जनरल): श्रीमान्, मैं संशोधन का समर्थन करता हूं। हमने विधान में निर्वाचित गवर्नर की व्यवस्था की है और मैं नहीं समझता कि उससे क्यों डर होना चाहिये, जो उसे भी अधिकार देना आप नहीं चाहते हैं। समय-समय पर गवर्नर को सूत्र अपने हाथ में लेने की आवश्यकता हो सकती है और अगर व्यवस्थापिका किसी बिल पर दुबारा विचार करती हे तो उसमें हानि क्या है? मैं सभा से अपील करता हूं कि वह गवर्नर को कुछ अधिकार दे जिससे वह समाज के लिये लाभप्रद हो सके, अन्यथा आप गवर्नर का पद ही हटा दीजिये। मैं समझता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

***माननीय श्री हुसैन इमाम** (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, वाद-विवाद में इस स्थल पर मैं इसलिये दखल दे रहा हूं कि यहां यह प्रथा चल जाये कि जब भी इस तरह की गम्भीर बातों पर बहस हो तो विधाान-परिषद् को यह बताया जाये कि इनके सम्बंध में तमाम दुनिया में क्या होता है। मुझे खेद है श्रीमान्, कि इस समय बहुत से मित्रों के दिमाग में संसार के सभी देशों के विधानों का नक्शा नहीं मौजूद है। शायद उन्होंने उन विस्तृत नोटों को भी नहीं पढ़ा है जिन्हें वैधानिक सलाहकार के आदेश से विधान-परिषद् के स्टाफ ने सदस्यों को भेजा है।

मैं केवल एक उदाहरण यहां देता हूं। अमेरिका में बावजूद द्विसभात्मक परिषद् के सिनेट और प्रतिनिधि सभा के राष्ट्रपति को किसी भी बिल को रद्द करने का विशेषाधिकार प्राप्त है। पर यदि दोनों सभाओं के दो तिहाई बहुमत से अगर बिल फिर पास होता है तो राष्ट्रपति का विशेषाधिकार उस बिल के सम्बन्ध में लागू न होगा; इसके अलावा राष्ट्रपति को एक और विशेषाधिकार प्राप्त है जिसके जरिये वह किसी भी बिल को यदि वह सभा का अधिवेशन प्रारम्भ होने से 10 दिनों के अन्दर पास हो गया हो तो उसे नामंजूर कर सकता है। दुनिया में क्या होता

है यह बताने के लिये और भी बहुत सी बातें हैं। यह बड़ा ही लाभप्रद होगा अगर यहां यह परिपाटी चला दी जाये कि माननीय अध्यक्ष महोदय वैधानिक सलाहकार से सभा को यह व्यक्त करा दिया करें कि विवादास्पद मामलों में दुनिया के अन्य देशों में क्या पद्धति बरती जाती है। अवश्य ही वैधानिक सलाहकार महोदय ने हम लोगों को एक पुस्तिका दी है और यह हमारे लिये बड़े ही काम की होगी। फिर भी, दुनिया के अन्य भागों में विधान सम्बंधी इन प्रश्नों पर क्या पद्धति बरती जाती है, इसके सम्बंध में हमें और भी जानकारी मिलनी चाहिये।

मैं समझता हूं कि श्री सन्तानम् का संशोधन बड़ा ही आवश्यक है। संशोधन में आपने इस बात पर जोर दिया है कि यह आदेश केवल उन्हीं प्रान्तों पर लागू होगा जहां की व्यवस्थापिका एक सभामूलक होगी। संशोधनकर्ता का ख्याल है कि जहां व्यवस्थापिका की दो सभायें हैं, वहां तो नीचे वाली सभा पर ऊपर की सभा नियंत्रण का कार्य करेगी ही। श्रीमान्, हम समझते हैं कि यहां और स्पष्टीकरण की आवश्यकता हैं। अगर दोनों सभाओं में मतभेद होता है तो भिन्न-भिन्न देशों में इसे सुलझाने के भिन्न-भिन्न तरीके हैं। अर्थ सम्बन्धी बिलों के संबंध में कुछ देशों में ऐसा है कि दूसरी सभा बिल्कुल क्षमता शून्य है। उसे कोई अधिकार नहीं है। कुछ विधानों में अर्थ संबंधी बिलों के अलावा और सब प्रस्तावित कानूनों के सम्बन्ध में ऐसी व्यवस्था है कि दोनों सभाओं की सम्मिलित बैठक में फैसला किया जाता है और प्रायः नीचे वाली सभा के प्रबल बहुमत से ऊपर की सभा का निर्णय गिर जाया करता है। पर मैं जो कह रहा था वह यह है कि यह हमारी गलती है कि हम अब भी यही सोचें कि हमारा गवर्नर किसी बाहरी सत्ता द्वारा नियुक्त होगा। भविष्य में गवर्नर अपने पद पर इसलिये आसीन नहीं होगा कि वह तत्कालीन सत्ता के हितों की ही सेवा करे। वह हमारा अपना आदमी होगा जिसे हम बालिग मताधिकार के आधार पर चुनेंगे। इसलिये यह जरूरी है कि हमारा उस पर पूरा भरोसा और विश्वास हो। अगर आप उस पर भरोसा करते हैं, उस पर विश्वास रखते हैं और श्री सन्तानम् के संशोधन में सुझाई हुई व्यवस्था अपनाते हैं तो आप एक सुखद पथ पर पहुंच जायेंगे और देखेंगे कि अगर एक सभा किसी मामले में गलती पर है तो दूसरी सभा उसे सही-सही निपटा देती है। यही एकमात्र रास्ता है जिसके जरिये हम अंधकूप में गिरने से बच सकते हैं। मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***महाराजा सर एम. ए. मुथैया चेट्टियार** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि श्री सन्तानम् ने यह संशोधन पेश किया है और

[महाराजा सर एम.ए. मुथैया चेट्टियार]

सभा द्वारा उसके स्वींकृत हो जाने की आशा है। पर मेरी खुशी इस बात से कुछ कम हो जाती है कि यह व्यवस्था केवल उन्हीं प्रान्तों में लागू होगी जहां की व्यवस्थापिका एक सभात्मक है।

श्रीमान्, जहां भी दूसरी सभायें हैं उनके सम्बन्ध में हम लोगों का यही अनुभव रहा है कि हम उन पर इस बात का भरोसा नहीं कर सकते कि वे किसी प्रस्तावित कानून के शीघ्र न पास कर देने के लिये यथेष्ट नियंत्रण मूलक सिद्ध होंगे। गत कई वर्षों के अन्दर नीचे की सभा ने इतनी जल्दबाजी में कई कानून पास किये हैं कि उनकी बहुत सी भूलें रह गयीं और निचली सभा के नेता ने ऊपर वाली सभा से यह अनुरोध किया कि वह भूलों को सुधार कर मस्विदे उन्हें फिर लौटा दें। यह सब दिक्कतें दूर हो जायेंगी अगर नीचे वाली सभा को पुनर्विचार का मौका दिया जाये।

पुनर्विचार का अवसर देने के लिये कई कारण हैं। बहुत से मौकों पर सभी स्थायी आज्ञायें स्थगित रख दी जाती हैं और ऐसी कानून सम्बन्धी व्यवस्थायें जो सरकारी गजट में गत सायंकाल को छपती हैं, वे दूसरे ही दिन देखते-देखते तुरंत पास होकर कानून बन जाती हैं। वह कहते हैं कि ऐसी आकस्मिक स्थिति आ पड़ी है कि अगर व्यवस्थापिका अपने उठने से पहले इसे पास नहीं कर देती तो गवर्नर को आर्डिनेन्स निकालना पड़ेगा।

इस कारण से मैं कहता हूं कि हमें इस दिशा में एक कदम और आगे जाना चाहिये और इस संशेधन में जो एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांत की बात रखी गयी है उसे हटा देना चाहिये ताकि यह उन प्रान्तों में भी लागू हो सके जहां द्विसभात्मक व्यवस्थापिकायें हैं।

इस आशंका की सम्भावना के सम्बन्ध में, कि गवर्नर कहीं अपने इस अधिकार का दुरुपयोग न करे, मुझे खुशी है कि मेरे मित्र मिस्टर हुसैन इमाम ने यह बता दिया है कि गवर्नर कोई अजनबी न होगा बल्कि वह अपना आदमी, भारत के किसी प्रान्त का आदमी होगा। इस स्थिति में हम उससे यह आशा कर सकते हैं कि वह जनमत को ठीक-ठीक समझेगा और अगर उसका यह विश्वास हो कि व्यवस्थापिका जल्दबाजी में जनमत के खिलाफ कोई कानून पास कर रही है तो वह उसे पुनर्विचारार्थ व्यवस्थापिका को लौटा देगा। ऐसे अवसर आ सकते हैं जब कि व्यवस्थापिका को किसी प्रस्तावित कानून को पूरी तरह समझने का मौका

न मिले और ऐसे अवसरों के लिये पुनर्विचार का मौका पाकर वे प्रसन्न ही होंगे। गवर्नर की राय कायम करने में समाचार-पत्रों और जनमत का जबरदस्त हाथ रहेगा। अगर गवर्नर गलती करता है तो मंत्रिमंडल और जनमत उसे उसकी भूल बतायेंगे। मैं नहीं समझता कि गवर्नर अपने इस अधिकार का दुरुपयोग करेगा। आशा है कि प्रस्तावक महोदय तथा विभिन्न दलों के नेता, इसमें से एकात्मक व्यवस्थापिका का जिक्र हटा देंगे ताकि यह नियंत्रण द्विसभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांतों पर भी लागू हो सके।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर** (बम्बई: जनरल): इस संशोधन का समर्थन करने में मुझे बड़ी ही प्रसन्नता हो रही है। पर मैं अपने पूर्ववक्ता की इस बात से असहमत हूं कि यह व्यवस्था द्विसभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रान्तों में भी लागू होनी चाहिये। ऊपर वाली सभा से हमारा नियंत्रण सम्बन्धी अभिप्राय बहुत हद तक पूरा हो जायेगा। इसलिये उन प्रान्तों में जहां ऊपर वाली सभा है, गवर्नर को यह अधिकार देने की जरूरत नहीं है। इन शब्दों के साथ मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं संशोधन का समर्थन करता हूं। जो भाषण यहां हुये हैं, उनमें एक बात का जिक्र नहीं आया है। वह यह है कि कुछ ऐसे भी कानून पास हो सकते हैं जो कई अंशों में अनियमित, अवैधानिक और अधिकार से परे होते हैं। ऐसे मामलों में सम्भव है कि वह मन्त्री, जिसका उसके निर्माण में प्रधान हाथ रहा हो, खुद यह चाहता हो कि वह उस पर पुनर्विचार करे। इस तरह की व्यवस्था से उसे यह अवसर मिल जायेगा कि कानून के खिलाफ जनमत को देखकर वह अपने मन्तव्य पर पुनर्विचार कर सके। वह बात तो कल्पनातीत है कि नवीन विधान के अन्तर्गत गवर्नर अनुचित ढंग पर काम करेगा। इस हालत में, खुद मन्त्रिगण इस बात की इच्छा कर सकते हैं कि ऐसा अधिकार गवर्नर को दिया जाये। मैं समझता हूं कि 1935 के एक्ट में ऐसी व्यवस्था है और प्रस्तुत रिपोर्ट में इसी एक्ट का बहुत कुछ अंश रखा गया है। यह एक्ट अब एक अनुकरणीय कानून माना जा चुका है। मैं कह चुका हूं कि गवर्नर को यह अधिकार उन्हीं प्रान्तों में मिलना चाहिये जहां कि व्यवस्थापिका एक सभात्मक है और उससे यही आशा है कि वह इस प्रकार कार्य करेगा जिससे प्रान्त को लाभ हो।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रास : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, अभी उस दिन सभा ने एक खण्ड पास किया है जिसमें प्रान्तों को यह

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

अधिकार दिया गया है कि यह इच्छा पर है कि वे दूसरी सभा रखना पसन्द करते हैं या नहीं। इससे अभिप्राय यह था कि जो प्रान्त दूसरी सभा रखना चाहेंगे उनके सम्बन्ध में सभा उसे स्वीकार कर लेगी। इस हालत में इस नियंत्रणात्मक व्यवस्था को उन प्रान्तों के लिये क्यों कर अस्वीकार कर सकते हैं जो एकात्मक व्यवस्थापिका रखना चाहते हैं। या तो आप सभी प्रांतों को द्विसभात्मक व्यवस्थापिका रखने दीजिये या फिर उन प्रांतों को भी यह नियत्रंण मूलक व्यवस्था रखने दीजिये, जो केवल एक ही सभा रखना चाहते हैं। उन प्रांतों में जो एक सभात्मक व्यवस्थापिका रखना चाहते हैं, गवर्नर को यह अधिकार मिलना ही चाहिये जिससे जल्दबाजी में कोई कानून न पास हो; पर द्विसभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रान्तों को भी यह व्यवस्था हम अस्वीकार नहीं कर सकते। यही उचित, तर्कसंगत और आवश्यक है और इसलिये मैं इसका समर्थन करता हूं।

***श्री के. टी. एम. अहमद साहब बहादुर** (मद्रास: मुस्लिम): श्रीमान्, कोई कानून जल्दबाजी में न पास कर लिया जाये। इसके लिये गवर्नर को यह अधिकार देना नितान्त आवश्यक है। मेरा मत है कि यह अधिकार लोकतांत्रिक सिद्धांतों से प्रतिकूल नहीं है। संघ-विधान में इस आशय का आदेश है कि राष्ट्रपति 6 महीने के अन्दर लोक सभा द्वारा पास किये हुये किसी भी बिल को पुनर्विचारार्थ उसे लौटा सकते हैं। जो अधिकार संघ-विधान में राष्ट्रपति को दिया गया है, वही अधिकार प्रान्तों के गवर्नरों को दिया जाना चाहिये। इसमें ऐसी कोई बात नहीं है जो लोकतंत्र से असंगत हो।

श्रीमान्, इसके अलावा प्रान्त के गवर्नरों को बड़े व्यापक अधिकार दिये गये और प्रान्तीय विधान समिति का कहना है कि वे इनका दुरुपयोग न करेंगे। तब श्रीमान्, यह स्पष्ट है कि जब राष्ट्रपति को, जिसका निर्वाचन सीमित मताधिकार के आधार पर हुआ है, यह अधिकार दिया गया है तो फिर यह सर्वथा उचित है कि गवर्नर को, जो बालिग मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होगा, यह अधिकार दिया ही जाये। इसलिये श्री सन्तानम् के इस संशोधन का मैं खुशी से समर्थन करता हूं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं श्री सन्तानम् के इस संशोधन को एक परिवर्तन के साथ मानने के लिये तैयार हूं। मेरा सुझाव है कि उनके संशोधन के अन्तिम वाक्य से ''पूर्ण बहुमत से'' शब्द निकाल दिये जायें।

यह कहा गया है कि यह व्यवस्था उन प्रान्तों के लिये भी लागू होनी चाहिये जहां कि व्यवस्थापिका द्विसभात्मक है। मैं इसे जरूरी नहीं समझता क्योंकि जहां दो सभायें होंगी, अगर उनमें मतभेद हुआ तो यह उनकी सम्मिलित बैठक के सामने आयेगा ही। इसलिये यह अनावश्यक है।

***अध्यक्षः** श्री सन्तानम्, आप उत्तर में कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री के. सन्तानम्ः** मुझे इतना ही कहना है कि मैं सरदार पटेल के सुझाव को मंजूर करता हूं पर इस सम्बन्ध में मैं एक बात कहना चाहता हूं। जब बिल पुनर्विचारार्थ वापस भेजा जायेगा तो उस समय दोनों ही दल अपनी सारी शक्ति इकट्ठी करेंगे और अगर मन्त्रिमण्डल को 51 प्रतिशत का समर्थन नहीं प्राप्त होता है तो वह हार जायेगा। ''पूर्ण बहुमत से'' ये शब्द रहें, न रहें इससे कुछ नहीं आता जाता।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** श्रीमान्, मुझे नहीं मालूम हुआ कि आया श्री सन्तानम् के संशोधन को सभा ने स्वीकार किया या नहीं। यह बात मुझे नहीं मालूम हो पाई है और मैं समझता हूं कि बहुत से सदस्यों को भी नहीं मालूम हो पाई है कि ''पूर्ण बहुमत से'' शब्दों के सम्बन्ध में सभा का क्या निर्णय है।

***अध्यक्षः** श्री मैत्र, आप किस बात के बारे में बोल रहे हैं?

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्रः** मैं यह जानना चाहता हूं कि ''पूर्ण बहुमत से'' शब्दों के निकालने के सम्बन्ध में आप सभा की राय लेंगे क्या?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्री सन्तानम् ने सुझाव मान लिया है।

***अध्यक्षः** अब संशोधन का स्वरूप क्या है?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्री सन्तानम् ने जो कुछ कहा है उस पर मैं नहीं जाता। मैं उनके संशोधन को मंजूर करता हूं पर ''पूर्ण बहुमत से'' इन शब्दों को निकाल देने पर।

***डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बईः जनरल): अब वाक्य का स्वरूप यह होगाः

''अगर वह बिल धारा-सभा द्वारा संशोधन या बिना संशोधन के साथ पुनः स्वीकृत हो जाता है तो गवर्नर उस पर अपनी स्वीकृति देगा।''

***अध्यक्ष:** अब मैं खण्ड 24 पर मत लेता हूं। ''पूर्ण बहुमत से'' शब्दों को निकाल देने पर संशोधन का रूप यह है:

''एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रान्त के गवर्नर को यह अधिकार होगा कि वह अपने विवेक से धारा-सभा द्वारा स्वीकृत किसी बिल को पुनर्विचारार्थ लौटा दे और उसमें संशोधनों का सुझाव दे। अगर वह बिल धारा-सभा द्वारा संशोधन या बिना संशोधन के साथ पुन: स्वीकृत हो जाये तो गवर्नर उस पर अपनी स्वीकृति देगा।''

खण्ड 24 स्वीकृत हुआ।

भाग–2–प्रान्तीय न्यायाधीश

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 2–प्रान्तीय न्यायाधीश को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं रिपोर्ट के भाग–2–प्रांतीय न्यायाधीय को सभा के सामने उपस्थित करता हूं:

''(1) भारत सरकार के सन् 1935 ई. के एक्ट के हाईकोर्ट सम्बन्धी आदेश आवश्यक परिवर्तनों के साथ स्वीकार किये जाने चाहियें परन्तु राज्यसंघ के अध्यक्ष को सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस 'प्रान्त के गवर्नर' और प्रान्त के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस से सलाह लेकर (सिवाय उस दशा के जब कि हाईकोर्ट को चीफ जस्टिस की ही नियुक्ति करनी हो) न्यायाधीशों को नियुक्त करना चाहिये।

(2) हाईकोर्ट के न्यायाधीश उन वेतनों और भत्तों को पायेंगे जिन्हें प्रान्तीय व्यवस्थापिका कानून द्वारा निश्चित करेगी और जब तक वह ऐसा न करे उन वेतनों और भत्तों को पायेंगे जो परिशिष्ट में दिये गए हैं।

(3) न्यायाधीशों के वेतन और भत्ते उनके पद की अवधि के अन्दर कम नहीं किये जायेंगे।''

इस खण्ड का अभिप्राय यह है कि हाईकोर्ट के सम्बन्ध में सन् 1935 ई. वाले एक्ट की ही व्यवस्थायें अपना ली जायें पर न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बंध

में इसमें यह व्यवस्था रखी गई है कि राष्ट्रपति सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस तथा प्रान्त के गवर्नर की सलाह से उनकी नियुक्ति करेंगे। इन सर्वांगीण नियंत्रणों के फलस्वरूप हाईकोर्ट के न्यायाधीश दल विशेष के प्रभाव या अन्य किसी तरह के प्रभाव से सदा ऊपर रहेंगे और उन पर किसी प्रकार के सन्देह की गुंजाइश न रह जायेगी। इस तरह न्यायाधीशों की स्वंतत्रता पूर्णतया सुरक्षित कर दी गयी है। दूसरे दो खण्ड, जो वेतन और भत्ते के सम्बन्ध में हैं, परिणामवर्ती हैं और इनके सम्बन्ध में मैं समझता हूं कोई संशोधन नहीं आया है। इसलिये सभा की स्वीकृति के लिये मैं इन प्रस्तावों को सामने रखता हूं।

(सर्वश्री सुब्बारायन मल्लाया, रामालिंगम चेट्टियर और सेठ गोविन्ददास ने अपने संशोधन नहीं पेश किये।)

***अध्यक्षः** तो अब इस खण्ड पर कोई संशोधन नहीं है। कोई भी सदस्य इसके सम्बन्ध में कुछ बोलना चाहते हैं?

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रासः जनरल): मेरा भी एक संशोधन है।

***अध्यक्षः** आप उसे इस समय पेश कर सकते हैं।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से भाग 2 के खण्ड 1 के सम्बन्ध में मैं निम्नलिखित संशोधन रखना चाहता हूं।

''भाग 2 के खंड 1 के बाद निम्नलिखित आदेश जोड़े जायें:

'मगर शर्त यह है कि–

(क) भारतीय राज्य संघ के सभी हाईकोर्टों को उस समूचे इलाके में जहां की अपीलें सुनने का उन्हें अधिकार है, विशेषाधिकार-पत्र या इसकी जगह उपचार स्वरूप इसी तरह की अन्य आज्ञा जारी करने का अधिकार होगा।

(ख) गवर्नमेंट आफ इन्डिया एक्ट 1935 की दफा 226 में माल सम्बन्धी मामलों में उनकी अधिकार सीमा पर जो प्रतिबन्ध लगाया है वह हाईकोर्ट पर अब लागू न होगा।

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

(ग) गवर्नमेंट आफ इन्डिया एक्ट 1935 की धारा 224 में जो अधिकार संख्याबद्ध किये गये हैं उनके अलावा, हाईकोर्टों को अपने मातहत अदालतों पर निरीक्षण का अधिकार होगा जैसा कि गवर्नमेंट आफ इन्डिया एक्ट 1915 की दफा 107 के अनुसार उन्हें प्राप्त है'।''

अनियमितता या अन्तर दूर करने के हाईकोर्ट को जो अधिकार प्राप्त हैं उनमें कई ऐसी त्रुटियां रह गयी हैं जो बिल्कुल ही स्पष्ट हैं। इन खामियों को दूर करना तथा मौलिक अधिकारों को प्रयोग में लाने के लिये एक समुचित और कार्यकारी व्यवस्था का निर्माण करना ही इन संशोधनों का उद्देश्य है। खण्ड (क) में विशेषाधिकार-पत्र या इसकी जगह उपचारस्वरूप अन्य इस तरह की आज्ञा जारी करने की बात कही गयी है। उपचारस्वरूप उस तरह की अन्य आज्ञा जारी करने की बात इसलिये कही गयी है कि आज्ञा जारी करने के लिये सिर्फ दरख्वास्त दे देने से भी काम हो जाये जैसा कि इंग्लैंड में हाल के कानूनों के अनुसार होता है। कानून की मौजूदा सूरत में सिर्फ कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के हाईकोर्टों को उन मामलों में विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का अधिकार प्राप्त रहे जिनमें आरम्भिक तौर पर अपील सुनने का उन्हें हक हासिल है। ''स्पेसिफिक रिलीफ एक्ट'' के अदालती हुक्मनामा की जगह दरख्वास्त की यह व्यवस्था अपनायी गयी पर केवल प्रेसिडेन्सी शहरों के लिये ही। इस बात का कोई कारण समझ में नहीं आता कि प्रेसिडेन्सी शहरों से बाहर रहने वाले नागरिकों को इस सम्बन्ध में एक बिल और विस्तार वाली व्यवस्था के ही सहारे क्यों छोड़ा जाये जब कि प्रेसिडेन्सी शहर के बाशिन्दों को इस सम्बन्ध में हाईकोर्ट दरख्वास्त देने की सुविधा दी जाती है। जहां तक Habeas Corpus कानून के खिलाफ गिरफ्तार व्यक्ति को अदालत में पेश करने के हुक्म का सम्बन्ध है, फौजदारी के जाब्ते के मुताबिक, उन सभी इलाकों के लिये जहां की अपील सुनने का हाईकोर्ट को हक है, एक दरख्वास्त द्वारा ही ऐसी आज्ञा पाई जा सकती है। प्रिवी कौंसिल ने अभी हाल में यह फैसला किया है कि प्रेसिडेंसी शहरों में लोगों को यह अधिकार प्राप्त है कि वे हाईकोर्ट से दरख्वास्त करके किसी मामले को छोटी अदालत से बड़ी अदालत में पेश किये जाने का हुक्म हासिल करें ताकि हाईकोर्ट मातहत अदालत या उस तरह की किसी संस्था की ऐसी कार्रवाई के सम्बन्ध में जिसे उसने अपने अधिकार सीमा से बाहर जाकर किया है, ठीक व्यवस्था कर सके। खण्ड (क) के पास हो जाने से भारतीय राज्य संघ की सभी हाईकोर्टों को इन मामलों में उस सारे इलाके में विशेषाधिकार-पत्र

जारी करने का अधिकार हो जायेगा, जहां की अपील सुनने का हक उन्हें हासिल है। विधान में जिन मौलिक अधिकारों की गारन्टी दी गई है, इस खण्ड से उनकी सुरक्षा की एक सफल व्यवस्था हो जाती है। खण्ड (ख) उस अनियमितता को दूर करने के अभिप्राय से रखा गया है जो हाईकोर्टों की अधिकार सीमा के सम्बन्ध में वर्तमान है। यह अनियमितता वारेन हेस्टिंग्ज के काल से ही है। कानूनों की मौजूदा सूरत में एक जिला मुन्सिफ पर भी यह पाबन्दी नहीं लागू है कि वह माल सम्बन्धी मुकदमे की सुनवाई नहीं कर सकता, पर हाईकोर्ट पर ऐसी पाबन्दी लागू है। अभी उस दिन फेडरल कोर्ट ने यह मानते हुये भी, कि विवादी को हाईकोर्ट में मामला पेश करने का हर सूरत में अधिकार प्राप्त है, यह फैसला दिया कि हाईकोर्ट में लाया हुआ मुकदमा, दफा 226 की कानूनी बिना पर खारिज कर दिया जा सकता है। हाईकोर्टों की अधिकार सीमा पर लगाई हुई पाबन्दी कानूनी पेशे के सभी लोगों को खटकती है और भारत के हाईकोर्टों के कई वक्तव्यों में इस बात पर जोर दिया गया है। सन् 1935 के एक्ट के अनुसार हाईकोर्टों को कई मामलों में अपनी मातहत अदालतों की कार्यवाही पर निरीक्षण का अधिकार नहीं प्राप्त है और इस त्रुटि को पूरा करने के लिये आखिरी खण्ड यहां रखा गया है। मैं साहसपूर्वक कह सकता हूं कि इन संशोधनों को कानूनी पेशे के सभी लोगों का पूर्ण समर्थन प्राप्त है और मैं आग्रह करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करे।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, भाग 2 के खण्ड 1 का, जिसका सम्बन्ध प्रान्तीय न्याय विभाग से है, समर्थन करने के लिये मैं खड़ी हुई हूं। श्रीमान्, खण्ड के केवल उसी अंश के सम्बन्ध में ही मैं बोलूंगी जिसमें प्रान्तीय विधि निर्धारित की गई है। खण्ड का स्वरूप यों है:

> **''न्यायाधीशों की नियुक्ति राज्य संघ के अध्यक्ष द्वारा, सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस, प्रान्त के गवर्नर तथा प्रान्त के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस के परामर्श से की जानी चाहिये, सिवाय उस दशा के जब कि हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस की ही नियुक्ति करनी हो।''**

श्रीमान्, हम देखते हैं कि इस खण्ड में जो विधि हमने निर्धारित की है उसके जरिये प्रान्तों और प्रान्तीय सरकारों पर हमने एक बाहरी अधिकारी का हस्तक्षेप लाद दिया है। मैं समझती हूं कि ऐसे हस्तक्षेप से और ऐसी विधि से जिससे किसी बाहरी अधिकारी का हस्तक्षेप आवश्यक हो, लोगों के मन में कम-से-कम

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

यह भय तो जरूर ही पैदा होगा कि प्रान्तीय सरकार के अधिकार क्षेत्र पर एक तरह का आघात है और प्रान्तीय स्वराज्य के सिद्धान्तों के बिल्कुल प्रतिकूल है। श्रीमान्, मैं स्वयं स्वीकार करती हूं कि कुछ समय तक मेरा अपना भी यही ख्याल था कि इस मसले को प्रान्तीय सरकार पर यानी मन्त्रिमण्डल की राय से काम करने वाले गवर्नर पर छोड़ देना शायद ठीक होगा। परन्तु जरा सावधानी से इस पर विचार करने के बाद मैं इस राय पर पहुंची कि खण्ड निर्माता ने जो विधि निर्धारित की है उसमें और व्यवस्थाओं से ज्यादा लाभ है। अब आगे चलकर नई व्यवस्था में परिस्थितियां अब से भिन्न होंगी और हाईकोर्टों को बड़े-बड़े काम और बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियों का बोझ संभालना पड़ेगा। हाईकोर्ट विधान के संरक्षक होंगे, उन्हें उसका भाष्य करना होगा। विधान में दिये हुये मौलिक अधिकारों के वे संरक्षक होंगे। प्रत्येक सर्वसाधारण नागरिक न्याय और उचित व्यवहार के लिये हाईकोर्टों का सहारा लेगा। उन कोर्टों को सदा इस बात का ध्यान रखना होगा कि नागरिकों के अधिकार सुरक्षित हैं, इसलिये यदि हमें वस्तुतः इस उद्देश्य को प्राप्त करना है तो हमें यह देखना होगा कि हाईकोर्टों का काम खूब सफलतापूर्वक हो और यह सफलता निर्भर करती है जजों की योग्यता पर और उनकी नियुक्ति पर। न्यायाधीशों को निर्णय-स्वातंत्र्य होना चाहिये। यह स्वातंत्र्य बहुत कुछ निर्भर करता है उनकी नियुक्ति सम्बन्धी विधि पर। उनके मन में यह भावना नहीं आने देनी चाहिये कि किसी खास व्यक्ति, इस दल या उस दल की कृपा से उनकी नियुक्ति हुई है। उनको सदा यह अनुभूति होनी चाहिये कि वे स्वतंत्र हैं। सिर्फ इसी सूरत में न्याय विभाग का शासन समुचित रूप से चल सकता है। न्यायाधीशों के मन में ऐसी स्वातन्त्र्य भावना उत्पन्न हो इसके लिये वुछ न कुछ नियंत्रण मूलक व्यवस्था होनी चाहिये और खण्ड निर्माताओं ने, न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बन्ध में बाहरी अधिकारी का हाथ रख कर यह व्यवस्था पूरी कर दी है। हमारे मन में यह बात आ सकती है कि आखिर चीफ जस्टिस को यहां क्यों घसीटा गया है। परन्तु न्याय विभाग के शासन की विशुद्धता में अब आगे से सर्वोच्च न्यायालय का बहुत प्रमुख हाथ होगा। यह भारत के हाईकोर्टों में सर्वोच्च न्यायालय होगा और इसे आमतौर पर परामर्श देने का और अपील सुनने का वैसा ही अधिकार प्राप्त होगा जैसा कि प्रिवी कौंसिल को भारतीय मामलों के सम्बन्ध में प्राप्त है। इसलिये इसे सभी हाईकोर्टों के कामों को देखना होगा और प्रान्तीय न्याय विभाग सम्बन्धी मामलों में निरीक्षण, आदेश और नियंत्रण सम्बन्धी अधिकारों का प्रयोग करना होगा। हाईकोर्ट के कई मसले इसके सामने पुनर्विचार के लिये या अपील के तौर पर आयेंगे। इसलिये सर्वोच्च न्यायालय के

प्रधान न्यायाधीश को इन हाईकोर्टों के सम्बन्ध में बहुत कुछ करना होगा और यही नहीं, इसके न्यायाधीश हाईकोर्ट के जजों में से ही लिये जायेंगे। अतः इन सब बातों को ध्यान में रखते हुये मैं समझती हूं कि प्रान्तीय न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बन्ध में राज्य संघ के अध्यक्ष का सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश से परामर्श करना अत्यन्त आवश्यक है। अवश्य ही इस व्यवस्था से हमारे मन में यह आशंका नहीं उत्पन्न होनी चाहिये कि प्रान्तों की स्वतंत्रता पर बहुत कुछ प्रतिबन्ध लगाया जा रहा है। प्रत्युत यह नियंत्रण मूलक तो बिरले मौकों पर काम में लायी जायेगी और साधारणतः तो वही सिफारिशें स्वीकार की जायेंगी जिन्हें मन्त्रियों की सलाह से और प्रधान न्यायाधीश के परामर्श से गवर्नर पेश करेगा। जब तक कि गवर्नर की सिफारिशें दुरुस्त हैं और उसका चुनाव ठीक है, जैसा कि आमतौर पर लाजिमी है, उसी की सिफारिशों के अनुसार नियुक्ति होगी सिवाय उन चन्द बिरले मौकों को छोड़कर जब कि राज्य संघ के अध्यक्ष का हस्तक्षेप आवश्यक न हो जाये।

एक और बात भी हमें विचार में रखनी होगी और वह यह कि हमें ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि इस व्यवस्था द्वारा हम कोई बहुत अस्वाभाविक या नया काम कर रहे हैं। दुनिया के सभी संघ विधानों में कोई एक सा सिद्धान्त नहीं है कि प्रदेशों के हाईकोर्ट के जजों की नियुक्ति का अधिकार हर जगह प्रान्तीय सरकार के हाथ में ही हो। यह आवश्यक नहीं है। हमारे सामने कनाडा के विधान का उदाहरण मौजूद है जिसमें जजों की नियुक्ति का अधिकार गवर्नर-जनरल को प्राप्त है। इसलिये हम इस सिद्धांत को बिना किसी आशंका के या बिना किसी पर कृपा दिखाये स्वीकार कर सकते हैं और अपनी व्यवस्था में इसे अपना सकते हैं।

इन चंद बातों के साथ, श्रीमान, मैं इस खण्ड का समर्थन करती हूं और सभा से सिफारिश करती हूं कि वह इसे स्वीकार करे।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुरः** अध्यक्ष महोदय, सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन का मैं बड़ी खुशी से समर्थन करता हूं। 1935 के इण्डिया एक्ट के कारण तथा छोटी अदालतों से बड़ी अदालतों में मुकदमा जाये, इस हुक्मनामें के संबंध में प्रिवी कौंसिल का जो अभी हाल में निर्णय हुआ था, इसके परिणामस्वरूप हमें बड़ी कठिनाइयां भुगतनी पड़ती हैं। इसे देखते हुये इनमें प्रत्येक खण्ड बहुत आवश्यक है। प्रिवी कौंसिल के इस निर्णय के पहले तो हम मुफस्सिल में भी इस हुक्म का फायदा उठा पाते थे, पर इस निर्णय के बाद अब

[श्री बी. पोकर सहाब बहादुर]

हम सिर्फ प्रेसिडेन्सी नगरों में ही इसका फायदा उठा पाते हैं। यह बहुत ही जरूरी है। यह उपचार मूलक व्यवस्था मुफस्सिल में भी लोगों को प्राप्त हो।

हाईकोर्ट को निरीक्षणादि का अधिकार दिया गया है और यह उपचार गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 के पास होने के पहले था, किन्तु 1935 के एक्ट के नवीन आदेशों द्वारा ये हटा दिये गये हैं और मुफस्सिल कोर्टों की कार्य विधि पर हाईकोर्ट का निरीक्षण उठ जाने से उन लोगों को, जिन्हें अक्सर मुकदमों का काम पड़ा करता है, बड़ी दिक्कत महसूस हो रही है। हाईकोर्ट के निरीक्षण उठा देने का नतीजा यह हुआ कि अब जनता को क्रिमिनल पेनल कोड की दफा 15 का ही सहारा रह गया और यह दफा काफी नहीं है और इसमें वे सभी मामले नहीं आते जिसमें उपचार आवश्यक है। अतः श्रीमान्, यह आवश्यक है कि इन बातों का साफ तौर पर खुलासा कर दिया जाये, खासकर इसलिये कि अब आगे हमें अंग्रेजी परम्परा या दस्तूर तथा इंग्लैंड की नजीरों पर भरोसा न करना पड़े। मैं नहीं जानता कि मेरा उक्त कथन कहां तक सही है पर मैं समझता हूं कि आगे से हमें अंग्रेजी नजीरें और उनके दस्तूर बतौर प्रमाण के शायद न उपलब्ध हों। इन स्थितियों को देखते हुये यह नितान्त आवश्यक है कि इन खंडों को उस व्यवस्था में स्थान मिलना चाहिये जिसे हम स्वीकार करने जा रहे हैं।

इस खण्ड के सम्बन्ध में मुझे केवल एक और बात कहनी है। मैंने एक संशोधन की सूचना दी है जिसमें मैंने यह सुझाया है कि बजाय सम्बन्धित प्रान्त हाईकोर्ट के प्रधान न्यायाधीश के स्वयं हाईकोर्ट से इस मसले में परामर्श लेना चाहिये। परामर्श न केवल प्रधान न्यायाधीश तक ही सीमित हो बल्कि पूरे हाईकोर्ट से लिया जाये। मेरा संशोधन डा. सुब्बारायन के संशोधन के ऊपर है जिसकी सूचना उन्होंने दी है। पर चूंकि उन्होंने अपना संशोधन नहीं पेश किया है, मेरा संशोधन अपने आप गिर जाता है। फिर भी मस्विदा बनाने वाली कमेटी को मैं यह सुझाव देना चाहता हूं कि यह बहुत ही वांछनीय है कि परामर्श केवल प्रधान न्यायाधीश तक ही सीमित न हो बल्कि सारे हाईकोर्ट से परामर्श लिया जाये ताकि हाईकोर्ट के सभी जज अपनी बैठक में इस पर विचार करें और उनका फैसला सम्बन्धित अधिकारी को बता दिया जाये।

इन बातों के साथ मैं सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन का समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): श्रीमान्, मैं भाग 2 के 1-3 खण्डों का समर्थन करता हूं। साथ ही साथ माननीय प्रस्तावक महोदय

से मैं यह जानकारी चाहता हूं कि न्याय विभाग को शासन विभाग से बिल्कुल स्वतंत्र रखने का आन्दोलन देश में चल रहा है, उस पर भी कोई बहस हुई या नहीं और इस आन्दोलन का नतीजा हमें कब मालूम होगा। संघ अधिकार समिति की ओर से जो रिपोर्ट पं. जवाहरलाल नेहरू पेश करेंगे उसमें क्या इस पर विचार किया गया है। मैं केवल इतना ही पूछना चाहता हूं और आशा है माननीय प्रस्तावक इस बात पर हमें कुछ प्रकाश देंगे।

***रायबहादुर श्यामनन्दन सहायः** श्रीमान्, मैं प्रस्तावक महोदय तथा सभा का ध्यान भाग 2 के खण्ड 3 की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं, जिसमें यह कहा गया है कि ''जजों का वेतन और भत्ते में, उनके पद की अवधि के भीतर कमी नहीं की जायेगी।'' श्रीमान्, मैं यह सोच रहा था कि कमी न की जायेगी 'diminished' शब्द रखने से हमारी आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती है और उसकी जगह ''घटाव बढ़ाव न किया जायेगा'' रखना ठीक है। मुझे खेद है कि मैंने संशोधनों की सूचना नहीं दी क्योंकि दूसरे संशोधन थे जो मैं समझता था, पेश किये जायेंगे। खैर, प्रश्न महत्वपूर्ण है और इसलिये मैंने प्रस्तावक महोदय का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहा। शायद आगे चलकर मस्विदा बनाते समय इसमें सुधार कर दिया जाये। जिन कारणों और सिद्धांतों से प्रेरित होकर प्रान्तीय विधान कमेटी के सदस्यों ने यह व्यवस्था की है कि जजों के वेतन और भत्ते में उनके कार्यकाल में कमी नहीं की जायेगी। वही कारण और सिद्धान्त, मैं समझता हूं, उसको बढ़ाने में भी लागू होता है। स्वभावतः आप यह नहीं चाहेंगे कि न्यायाधीश लोग सदा या तो वेतन बढ़ाने की फिक्र में रहें या इस भय में पड़े रहें कि कहीं उनका वेतन घटा न दिया जाये। इन हालतों में मैं समझता हूं कि प्रस्तावक महोदय की स्वीकृति से ''यहां कमी न की जायेगी'' की जगह ''घटाव-बढ़ाव न किया जायेगा'' रखा जाये।

बाजाब्ता मैंने संशोधन के रूप में इसे नहीं रखा है, पर मैं समझता हूं कि यह प्रश्न महत्वपूर्ण है और सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहिये।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान् ससम्मान मैं निवेदन करना चाहता हूं कि मुझे यह दिखता है कि इस संशोधन से कई उलझनें पैदा हो सकती हैं। मैं सर अल्लादी कृष्णास्वामी के इस कथन से सहमत हूं कि हाईकोर्टों के अधिकारों को बढ़ाना होगा। गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट के अनुसार हाईकोर्ट के माल या राजस्व सम्बन्धी विचाराधिकार पर कई पाबन्दियां लगा दी गयी हैं। यही पहली त्रुटि है जिसे वह अपने संशोधन द्वारा दूर करना चाहते हैं, अपने संशोधन द्वारा वह चाहते हैं कि हाईकोर्टों को माल सम्बन्धी सभी मामलों

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

में भी विचार करने का अधिकार प्राप्त होगा, बावजूद उन तमाम प्रतिबन्धों और पाबंदियों के जो गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट में रखी गयी हैं। एक पाबन्दी दफा 226 में है, जिसकी इबारत यह है:

''समुचित व्यवस्थापिका के किसी कानून द्वारा जब तक कि अन्यथा व्यवस्था न हो किसी भी हाईकोर्ट को माल के मामलों में या मालगुजारी वसूली के सम्बन्ध में जो आज्ञा दी गयी है, या कार्यवाही की गयी हो उसके बारे में प्रारम्भिक तौर पर विचाराधिकार न प्राप्त होगा.....।''

क्या संशोधनकर्त्ता महोदय विधान कानून द्वारा माल के मामलों में भी हाईकोर्टों को प्रारम्भिक विचाराधिकार देना चाहते हैं या केवल माल की वसूली के सम्बन्ध में। ये बातें तो बाद में दे दी गई हैं। अगर ऐसा अधिकार दिया जाता है और उसे विधान में लिपिबद्ध कर दिया जाता है तो उसका फल यह होगा कि अगर बाद में अनुभव के आधार पर कोई परिवर्तन करना आवश्यक हो जाये तो फिर विधान कानून में ही संशोधन करके हम ऐसा कर सकते हैं। व्यवस्थापिका को हाईकोर्टों की अधिकार सीमा को बढ़ाने या उन पर लगायी गयी पाबन्दियों को दूर करने के लिये कानून बनाने के अधिकार देने में तो कोई आपत्ति ही नहीं है।

जहां तक अदालती परवाना जारी करने के अधिकार का सम्बन्ध है वह वर्तमान समय में कौंसिल की किसी ऐसी आज्ञा के अधीन है जिसे सरकार ने दफा 223 के अनुसार पास किया हो या जिसे सपरिषद् सम्राट ने दी हो। कुछ अदालती परवाने तो ऐसे भी हो सकते हैं जो अप्रचलित हो गये हैं, कुछ आवश्यक हो सकते हैं और कुछ ऐसे भी होंगे जिनको चालू रखना आगे चलकर अनावश्यक हो जायेगा। हमें विस्तार की बातों में नहीं जाना है। अगर इसमें किसी सुधार की आवश्यकता हुई तो दोनों सभाओं में दो तिहाई सदस्य संख्या जरूरी होगी और विधान संशोधन सम्बन्धी सारे जाब्ते से हमें गुजरना होगा, जैसा कि और आवश्यक मामलों में होता है। हम आसानी से यहां यह व्यवस्था कर सकते हैं कि प्रान्तीय व्यवस्थापिका को हाईकोर्ट की अधिकार सीमा को बढ़ाने या उस पर पाबन्दी लगाने का अधिकार होगा। मैं नहीं समझता कि किसी भी ऐसी बात को इस तरह के विधान कानून में लिपिबद्ध करने की जरूरत है।

फिर खण्ड (ग) में कहा गया है कि 1935 के गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट की दफा 224 में जिन अधिकारों का जिक्र है, उनके अलावा गवर्नमेंट आफ इण्डिया

एक्ट की दफा 107 के अनुसार मातहत कोर्टों पर निरीक्षण रखने का भी अधिकार हाईकोर्ट को प्राप्त होगा।

मैं यह नहीं कहता कि हाईकोर्टों के अधिकारों को जिस तरीके पर सर अल्लादी अपने संशोधन के जरिये बढ़ाना चाहते हैं वह न बढ़ाया जाये। मेरा कहना यह है कि स्थानीय व्यवस्थापिका को तो खुद यह अधिकार प्राप्त है कि हाईकोर्ट को वह कुछ भी अधिकार दे, न सिर्फ वही अधिकार जिनका जिक्र दफा 107 में आया है बल्कि इससे भी ज्यादा। हम इस पर अमुक या तमुक पाबन्दी क्यों लगावें। स्पष्ट है कि सर अल्लादी का ख्याल है कि विधान का जो मस्विदा यहां पेश है और जिस पर हम विचार कर रहे हैं उसमें वह सारी व्यवस्थायें आ जानी चाहिए जो चालू गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में विद्यमान हैं। मेरा मत यह है कि उन व्यवस्थाओं को हमें ज्यों का त्यों नहीं यहां शामिल कर लेना चाहिये, चाहे वे बुरी हों या भली। विस्तार की बातों पर विधान निर्माता खुद विचार करेंगे और स्थानीय व्यवस्थापिकाओं को बिना सपरिषद सम्राट के हस्तक्षेप के कानून या नियम बनाने का जरूरी मामलों में हाईकोर्टों की अधिकार सीमा को बढ़ाने का तथा जहां भी जरूरी हो अदालती परवाना जारी करने का अधिकार देंगे। यह विस्तार की बातें हैं और उन्हें एक समिति को सुपुर्द करना होगा जो विचार करेगी कि इन्हें किस तरह बढ़ाया जाये। इन सब बातों पर विचार करने का अधिकार व्यवस्थापिका को होगा जिसका हम निर्माण करने का इरादा करते हैं। अवश्य ही, सर अल्लादी यह कहेंगे कि यह बातें ऐसी नहीं हैं जिन्हें व्यवस्थापिका के सदस्य अपनी बैठक में निपटा लेंगे; इन्हें तो विशेषज्ञों की एक समिति के सुपुर्द कर देना चाहिये ताकि इन्हें अन्तिम रूप से विधान में शामिल करने के पहले, वे प्रत्येक खंड पर पूरी तरह से विचार करें। इस बात का मौका हमारे पास नहीं है। सर अल्लादी केवल इतना ही कहते हैं कि हाईकोर्ट के अधिकारों को एक खास तरीके पर बढ़ा देना चाहिये चाहे वे अच्छे हों या बुरे। हम मानते हैं कि अधिकार बढ़ाना अच्छा है पर बाद में ऐसा हो सकता है कि ये अधिकार बुरे, कष्टदायी या कठोर सिद्ध हों। इनको विकेंद्रित करने की आवश्यकता पड़ सकती है। मातहत अदालतों पर निरीक्षण का अधिकार कई मामलों में अनावश्यक और अवांछनीय हो सकता है। इसलिये, यदि हम इन अधिकारों को अखंडनीय रूप से या सदा के लिये हाईकोर्टों को दे देते हैं तो इससे बड़ी दिक्कत आयेगी। इन विस्तार की बातों को हम यहां क्यों रखें। इसलिये मैं तो यह कहूंगा कि इस ओर सभा का केवल ध्यान आकृष्ट करने के लिये ही मेरे मित्र ने संशोधन रखा है। निस्संदेह उन्होंने गलत तरीका चुना है। सही तरीका यह होगा कि व्यवस्थापिका के सामने ये बातें रख दी जायें और ऐसा किया जाये कि प्रांतीय व्यवस्थापिका को, माल के

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

मामलों में हाईकोर्ट के निरीक्षण सम्बन्धी अधिकार को बढ़ाने की क्षमता प्राप्त हो जाये। अतः मैं अनुरोध करता हूं कि वे अपने संशोधन पर जोर न दें क्योंकि इससे अनावश्यक जटिलतायें पैदा होंगी।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् ने ये बातें वर्तमान गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट के आधार पर कही हैं। पर सर अल्लादी के संशोधन के कारण सभा को पूरी तौर से बता दिया गया है। जहां तक विशेषाधिकार पर (Prerogative writs) या विशेष परवाना जारी करने की बात है, वह तो एक बारीक कूननी बात है और स्वाभाविक है कि साधारण आदमियों को उसे समझने में कठिनाई हो सकती है। पर हमें यह महत्वपूर्ण तथ्य जानना होगा कि ऐसे विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का अधिकार हमारे देश में केवल तीन ही हाईकोर्टों को प्राप्त है। केवल बम्बई, कलकत्ता और मद्रास के हाईकोर्टों को ही इस सम्बंध में 'किंग्स बैंच डिवीजन' का दर्जा प्राप्त है और वे ही इन शहरों में इन मामलों में विशेषाधिकार-पत्र जारी कर सकते हैं जिनमें आरम्भिक तौर पर अपील सुनने का उन्हें अधिकार है।

दूसरे हाईकोर्टों को यह अधिकार नहीं प्राप्त है और इन तीन हाईकोर्टों को भी केवल इन्हीं नगरों में उन मामलों में जिनमें आरंभिक तौर पर सुनवाई का उन्हें हक है, ऐसी आज्ञा निकालने का अधिकार है। इस संशोधन का आशय यही है कि दूसरे हाईकोर्टों को भी विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का वैसा ही अख्तियार हो जैसा कि इंग्लैंड में 'किंग्स बैंच डिवीजन' को है। यह बात गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में नहीं आती है और न किसी दूसरे कानून से ही पूरी होती है। इस संशोधन का यही मतलब है कि भारत के प्रांतीय हाईकोर्टों को वही अधिकार प्राप्त हों जो, 'किंग्स बैंच डिवीजन' को प्राप्त हैं। ये विशेषाधिकार-पत्र बहुत प्राचीन हैं और अंग्रेजी कानून में इनका सुपरिचित स्थान है। पर इनमें बहुतों का प्रयोग कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के हाईकोर्टों में चालू किया गया है। सभा के कानूनदां सदस्य यह जानते होंगे कि सन् 1942-45 के कठिन दिनों में जबकि भारत रक्षा कानून पर आम अमल होता था, इन विशेषाधिकारों ने नागरिकों की स्वतंत्रता को जीवित रखने में बड़ा ही सहयोग दिया था। इसके अतिरिक्त हमें यह भी समझना चाहिये कि भारत का, स्वतंत्र भारत का यह विधान एक स्वतंत्रता-पत्र के समान होगा। इसमें मौलिक अधिकारों को भी लिपिबद्ध किया जायेगा। और कतिपय मौलिक अधिकारों के सम्बंध में जनता को क्या अधिकार

होंगे तथा सरकार के क्या कर्तव्य और दायित्व होंगे, यह भी लिपिबद्ध रहेगा। इन सबों को कार्यान्वित कराने के लिये कोई न कोई व्यवस्था होनी चाहिये और उसी तरह की जैसी कि एक अंग्रेज नागरिक को किंग्स बैंच डिवीजन के जरिये अपने अधिकार प्राप्त कराने की व्यवस्था उपलब्ध है। राज्य संघ के विधान में जहां सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की बात है, वहां इसी न्यायालय को विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का अधिकार दिया गया है। अब अगर विधान सम्बंधी अधिकारों के बारे में या अन्य अधिकारों के बारे में यह विशेषाधिकार सिर्फ सर्वोच्च न्यायालय को हैं और अन्य हाईकोर्टों को नहीं हैं, तो इसका यह मतलब होगा कि अपने अधिकारों की मान्यता प्राप्त करने के लिये प्रत्येक नागरिक को दिल्ली ही आना होगा। सर अल्लादी कृष्णास्वामी के संशोधन का मूल अभिप्राय इतना ही है कि सभी हाईकोर्टों को भी अपने अधिकार सीमा के अंदर विशेषाधिकार पत्र जारी करने का अधिकार प्राप्त हो। इस खंड का यही उद्देश्य है। विधान में इसको रखना जरूरी है क्योंकि अन्यथा संभव है कि व्यवस्थापिका हाईकोर्ट के कतिपय अधिकारों को ले ले या लेने का प्रयास करे। इस सम्बंध में गवर्नमेंट आफ इंडिया से कोई समता लागू न होगी। हमारे उद्देश्य को देखते हुए इस संशोधन का रहना आवश्यक है। मैं जानता हूं कि ''विशेषाधिकार पत्र'' शब्द बड़ा स्पष्ट है। यही कारण है कि सर अल्लादी ने संशोधन में ये शब्द रखे हैं ''any substituted remedy''। अभिप्राय यह है कि विधान में एक स्पष्ट आदेश द्वारा या विधान के अंतर्गत बनाये किसी कानून के द्वारा इन विशेषाधिकारों को कायम रखा जाये। इसके सम्बन्ध में कोई संदेह नहीं हो सकता। विशेषाधिकार-पत्र तो विशेषत: इंग्लैंड के सर्वसाधारण कानून से निकले हैं, पर इस बात की कोशिश की जा रही है कि इनको विधान पुस्तक में एक निश्चित रूप में लिपिबद्ध कर दिया जाये। कोई कारण नहीं है कि हम अब सर्वसाधारण प्रचलित कानून को वर्तमान मस्विदे में अस्पष्ट रूप में रहने दें, आगे चलकर इस बात की कोशिश की जायेगी। इन विशेषाधिकार-पत्रों या हुक्मनामों की समुचित कानून के जरिये व्याख्या कर दी जाये। इस संशोधन में सारभूत सिद्धांत यह है कि प्रांतीय हाईकोर्टों को विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का या इसी तरह की अन्य किसी उपचार मूलक व्यवस्था को अपनाने का अधिकार होगा। अत: मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् द्वारा उठाई हुई आपत्तियां मान्य नहीं हैं। जहां तक खंड (ख) का सम्बंध है, गवर्नमेंट आफ इंडिया ने माल सम्बंधी मामलों के अधिकार के सम्बंध में एक पाबन्दी लगा दी है। चूंकि पहले से ऐसा होता आया है, भारत सरकार ने यह पाबन्दी लगाई है। प्रस्तुत संशोधन द्वारा यह सिद्धांत स्वीकार किया गया है कि माल सम्बंधी मामले भी कानून के अधीन

[श्री के.एम. मुंशी]

होंगे। जहां तक खंड (ग) का सम्बन्ध है जिसमें मातहत अदालतों पर निरीक्षण की बात कही गई है, हाईकोर्टों को अपनी सभी मताहत अदालतों की कार्रवाईयों पर निरीक्षण करने का अधिकार होगा और इस खंड की विस्तृत व्याख्या आवश्यक है। मूल उद्देश्य यह है कि यह सिद्धान्त विधान में लिपिबद्ध कर लिया जाये। यह इरादा नहीं है कि प्रांतीय व्यवस्थापिका को हाईकोर्टों के इन अधिकारों के साथ हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त हो। इन मामलों में हाईकोर्टों के अधिकार और उनकी स्वतंत्रता कायम रखनी होगी ताकि व्यवस्थापिका अपने बहुमत से नागरिकों की स्वतंत्रता और अधिकारों को कम न कर पाये। नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा और गणतंत्र की भलाई के लिये ये अधिकार आवश्यक हैं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** श्रीमान् भाग 2 का खंड 3 यह कहता है कि प्रांतीय हाईकोर्ट के न्यायाधीशों का वेतन उनकी पद की अवधि के अंदर कम नहीं किया जायेगा, पर उसमें यह बात कहीं भी नहीं कही गई है कि उनका वेतन बढ़ाया भी नहीं जा सकता। हर तरह हमें हाईकोर्टों की मर्यादा और निष्पक्षता को कायम रखना होगा। अगर हम इस बात को अपने विधान में नहीं व्यक्त करते कि उनके वेतन में तो कमी और वृद्धि न की जायेगी तो इससे हम इस बात का उनको मौका देंगे। क्योंकि आखिर वे भी मनुष्य हैं कि अपनी वेतन वृद्धि के लिये वे व्यवस्थापिका की कृपा दृष्टि की ताक में रहें। यह महत्वपूर्ण बात है। मैंने किसी संशोधन की सूचना नहीं दी है। क्योंकि कई माननीय सदस्यों ने अपने संशोधन भेजे थे। इसीलिये मेरे मित्र रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय ने परिवर्तन का सुझाव रखा है और मैं आशा करता हूं कि माननीय प्रस्तावक इसे स्वीकार कर लेंगे फिलहाल जो व्यवस्था रखी गयी है वह यों है:

''न्यायाधीश के वेतन और भत्ते में उनके पद की अवधि के अन्दर कमी नहीं की जायेगी।''

मेरा सुझाव है कि '' कमी न की जायेगी'' की जगह ''घटाव बढ़ाव न किया जायेगा'' रखा जाये। उस हालत में परिवर्तित पाठ यों हो जायेगा:

''न्यायाधीशों के वेतन और भत्ते में उनके पद की अवधि के अन्दर घटाव बढ़ाव नहीं किया जायेगा।''

सभा की स्वीकृति के लिये मैं इसको सामने रखता हूं।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, भाग 2 खंड 1 के सम्बंध में मैं एक बात कहना चाहता हूं। इसके पहले हिस्से में यह कहा गया है कि:

''1935 के गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की हाईकोर्ट से सम्बन्ध रखने वाली व्यवस्थायें आवश्यक परिवर्तनों के साथ अपनाई जायें।''

मैं देखता हूं कि गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की 219 लगायत 231 की धारायें हाईकोर्टों के सम्बंध में हैं। इस एक्ट की एक महत्वपूर्ण व्यवस्था में मैं देखता हूं कि भाषा सम्बंधी प्रश्न आया है। इस एक्ट की धारा 227 में कहा गया है:

''प्रत्येक हाईकोर्ट की कार्यवाही अंग्रेजी भाषा में होगी।''

मैं नहीं समझता कि इस बात की ओर काफी ध्यान दिया गया है। श्रीमान्, मैं यह नहीं समझता कि प्रस्तावक महोदय का यह मन्तव्य है कि हाईकोर्टों की कार्यवाही अंग्रेजी में दर्ज की जाये। हम आजकल अपनी राष्ट्रीय भाषा अथवा अखिल भारतीय भाषा के सम्बंध में चर्चा कर रहे हैं। मेरा अपना मत तो यह है कि प्रत्येक प्रांत में वहां की कार्यवाहियों में, जिसमें हाईकोर्टों की कार्यवाही भी शामिल है, वहां की ही भाषायें चलाई जानी चाहियें। यह हो सकता है कि कुछ परिवर्तन काल में कुछ समय के लिये हम अंग्रेजी भाषा रख लें, पर मैं नहीं समझता कि हम सदा के लिये हाईकोर्ट की भाषा अंग्रेजी ही रहने दें। पर वस्तुस्थिति यह है कि अगर हम इस खंड के पहले हिस्से को इसकी मौजूदा शक्ल में ''आवश्यक परिवर्तनों के साथ'' स्वीकार कर लेते हैं तो संभव है कि हम हाईकोर्टों में अंग्रेजी भाषा रखने की बात मान लेते हैं और उससे बंध जाते हैं। इसलिये मैं चाहता हूं कि इस खंड में ऐसी उपयुक्त व्यवस्था रखी जाये जिससे हम गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट की धारा 227 से बच सकें।

***अध्यक्ष:** चूंकि और कोई बोलना नहीं चाहता, प्रस्तावक यदि चाहें तो अपना जवाब दे सकते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं सर अल्लादी के संशोधन को स्वीकार करता हूं। दो एक प्रश्नों के सम्बंध में जो यहां अभी उपस्थित किये गये हैं, मैं चन्द शब्द कहना चाहता हूं। श्री जयपालसिंह के इस प्रश्न के सम्बंध में, कि न्याय विभाग को शासन विभाग से पृथक करने के सम्बंध में क्या किया गया है,

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

मैं केवल इतना ही कह सकता हूं कि इस प्रश्न को उठाने का यह उपयुक्त स्थान नहीं है। जिस खंड पर हम अभी विचार कर रहे हैं, उसमें तो केवल इन्ही बातों का जिक्र है कि हाईकोर्ट का निर्माण किस तरह हो, उसका विधान क्या हो, जजों की नियुक्ति का तरीका क्या हो और उसके अधिकार क्या हों इत्यादि, इत्यादि। जो प्रश्न उन्होंने उपस्थित किया है, उस पर तो व्यवस्थापिका ही विचार कर सकती है। यह नीति सम्बंधी प्रश्न है जिस पर व्यवस्थापिका को फैसला करना होगा और मैं नहीं समझता कि अब भी न्याय विभाग को शासन विभाग से पृथक करने में कोई मतभेद होगा।

दूसरी बात जो उठाई गयी है वह यह है कि ''कमी की जायेगी'' की जगह ''घटाव बढ़ाव न किया जायेगा'' रखा जाये। मैं इस परिवर्तन को आवश्यक नहीं समझता क्योंकि वर्तमान अवस्था में यह बात कही गई है कि वेतनादि में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं किया जिससे जजों को नुकसान हो। इसलिये खंड की शब्दावली में कोई परिवर्तन नहीं करना चाहता।

जैसा कि मैंने कहा है, सर अल्लादी के संशोधन को मैं मंजूर करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि वह उनकी तजवीज को मंजूर करें।

***अध्यक्षः** अब मैं प्रस्ताव पर सभा की राय लूंगा।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारतीः** हाईकोर्ट की भाषा के संबंध में जो मेरा प्रश्न था उसका कोई उत्तर नहीं मिला। यह आवश्यक प्रश्न है।

***अध्यक्षः** वस्तुतः यह आवश्यक प्रश्न है, पर मैं समझता हूं कि मस्विदा बनाने वाली कमेटी इस पर ध्यान देगी।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारतीः** श्रीमान्, ''आवश्यक परिवर्तनों के साथ'' का मतलब तो कुछ भी हो सकता है। मौजूदा शक्ल में तो इसका यह मतलब है कि विधान का मस्विदा बनाते समय गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की व्यवस्थाओं में परिवर्तन नहीं कर सकते। हम अगर इसे ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेते हैं तो मस्विदा बनाने वाली कमेटी इस बात से बंध जायेगी कि हाईकोर्ट की भाषा अंग्रेजी में रखी जाये।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मैं तो समझता हूं कि ''mutatis mutandis'' का मतलब है ''आवश्यक परिवर्तनों के साथ''।

***अध्यक्ष:** हां, यही मेरी भी धारणा है। इसके अंतर्गत कोई भी परिवर्तन जो मस्विदा बनाने वाली कमेटी अंत में करना चाहेगी, आ जायेगा।

मैं सर अल्लादी के संशोधन पर मत लेता हूं। संशोधन यह है कि:

''खंड 1 में निम्नलिखित आदेश जोड़ा जाये:

'मगर शर्त यह है कि–

(क) भारतीय राज्य संघ के सभी हाईकोर्टों को उस समूचे इलाके में, जहां की अपीलें सुनने का उन्हें अधिकार है, विशेषाधिकार-पत्र या इसकी जगह उपचार की अन्य आज्ञा जारी करने का अधिकार होगा।

(ख) गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की दफा 226 में माल सम्बन्धी मामलों में उनकी अधिकार सीमा पर जो प्रतिबन्ध लगाया गया है वह हाईकोर्टों पर अब लागू न होगा।

(ग) गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट सन् 1935 ई. की दफा 224 में जो अधिकार संख्याबद्ध किये गये हैं उनके अलावा हाईकोर्टों को अपने मातहत अदालतों पर निरीक्षण का अधिकार होगा जैसा कि गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की दफा 107 के अनुसार उन्हें प्राप्त हैं'।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** सभा का मत जानने के लिये मैं प्रस्ताव को संशोधित रूप में अर्थात् उन व्यवस्थाओं के साथ जो अभी स्वीकार की गई हैं, सभा के सामने रखता हूं। मैं नहीं समझता कि मुझे पूर्ण खण्ड पढ़ने की जरूरत है।

भाग 2 संशोधित रूप में स्वीकृत हुआ।

भाग 3–प्रान्तीय पब्लिक सर्विस कमीशन और प्रान्तीय आडिटर जनरल

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 3 को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, यह भाग पब्लिक सर्विस कमीशन और आडिटर जनरल के सम्बन्ध में है:

''पब्लिक सर्विस कमीशन और आडिटर-जनरल के सम्बन्ध में, गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की व्यवस्थाओं के आधार पर ही व्यवस्थायें रखनी चाहियें। प्रत्येक प्रान्त के पब्लिक सर्विस कमीशन के मेम्बरों और उसके अध्यक्ष तथा आडिटर-जनरल की नियुक्ति का अधिकार गवर्नर-जनरल को उनके विवेक पर देना चाहिये।''

विचार यह है कि यह अधिकार गवर्नर को दिया जाये; मैं इस प्रस्ताव को आपकी स्वीकृति के लिये आपके सामने रखता हूं।

***अध्यक्षः** इस पर श्री खुरशीदलाल, श्री गोपीनाथ श्रीवास्तव, श्री एस.एल. सक्सेना, पं. पंत तथा श्री सन्तानम् के संशोधन आए हैं।

(संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, भाग 3 के सम्बन्ध में मेरा एक संशोधन है (ता. 16-7-47 की पूरक सूची में संख्या नं. 23)। यद्यपि मैं इस समय संशोधन नहीं उपस्थित करना चाहता हूं परन्तु, श्रीमान्, मैं चाहता हूं, कि इस सम्बन्ध में आप यह आदेश दे दें कि संघ विधान पर विचार करने के समय इस संशोधन पर विचार किया जा सकता है, जैसा कि अभी सुझाव आया है कि इस पर उस समय विचार किया जा सकता है। मैं केवल इस बात का निश्चय कर लेना चाहता हूं कि उस समय इसे अनियमित न करार दे दिया जाये।

***अध्यक्षः** यदि आप संशोधन पेश करना चाहते हैं तो अभी कर सकते हैं। भविष्य के सम्बन्ध में मैं आपको कोई वचन नहीं दे सकता। मैं आपको संशोधन अभी वापस लेने की अनुमति दे सकता हूं, अगर आप चाहें, और समुचित समय में इस प्रश्न पर विचार किया जायेगा कि आया अन्य रिपोर्ट के सम्बन्ध में संशोधन पेश किया जा सकता है या नहीं।

***श्री के सन्तानम्:** मैं अपना संशोधन नहीं रखना चाहता।

अध्यक्षः प्रस्ताव यह है कि भाग 3 को स्वीकार किया जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

भाग 3

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

''1. इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रांत में कोई व्यक्ति गवर्नर के पद पर हो तो वह पदासीन रहेगा और इस विधान के अधीन उस समय तक प्रान्त का गवर्नर समझा जायेगा जब तक कि इस विधान के अधीन नियमित रूप से निर्वाचित उसका उत्तराधिकारी पदासीन हो जाये।

2. मंत्रिमंडल, लेजिस्लेटिव असेम्बली और कौंसिल (उन प्रान्तों में जो ऊपर की सभा रखने का निर्णय करें) के सम्बन्ध में भी आवश्यक परिवर्तनों के साथ इसी प्रकार के आदेश होने चाहियें।

3. सब सम्पत्ति, अधिकारों और देने पावने के सम्बन्ध में हर एक गवर्नर के प्रान्त की सरकार, इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले की उस प्रान्त की सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।''

यह आदेश परिवर्तन काल के लिये है ताकि शासन व्यवस्था के लुप्त हो जाने की स्थिति न उत्पन्न हो जाये। मैं नहीं समझता कि इस पर कोई मतभेद हो सकता है और आशा है, यह मंजूर किया जायेगा।

***श्री टी.ए. रामालिंगम चेट्टियार** (मद्रास: जनरल): खण्ड 1 पर मैं अपना संशोधन (संख्या 119 सूची ता. 15-7-47) नहीं रखना चाहता।

***श्री के. सन्तानम्:** खण्ड 3 के सम्बन्ध में मैं अपना संशोधन (संख्या 24 दूसरी पूरक सूची ता. 16-7-47) को नहीं पेश करना चाहता हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** खण्ड 1 के सम्बन्ध में मैं अपना संशोधन (ता. 16-7-47 की दूसरी पूरक सूची सं. 24) नहीं पेश करना चाहता।

(पं. गोविन्द मालवीय, श्री रोहिणीकुमार चौधरी, श्री अनन्तशयनम् आयंगर, श्री मोहनलाल सक्सेना तथा प्रो. एन.जी. रंगा ने अपने संशोधन पेश नहीं किये, जो तीसरी और चौथी पूरक सूची में थे।)

***अध्यक्ष:** श्री अनन्तशयनम् आयंगर के दो संशोधन हैं और दोनों ही स्वतंत्र प्रस्ताव हैं, इन्हें बाद में लूंगा।

***श्री के.एम. मुन्शी:** मुझे इस भाग के खण्ड 3 के सम्बन्ध में सिर्फ एक बात कहनी है। खण्ड का रूप यह है:

''सब सम्पत्ति, अधिकारों और देने पावने के सम्बन्ध में हर एक गवर्नर के प्रान्त की सरकार, इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले की उस प्रान्त की सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।''

श्रीमान्, मैं ऐसा समझता हूं कि यहां ''सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी'' शब्दों के रखने से कुछ कठिनाई आ सकती है और इस समय खण्ड 3 को रखने से कोई अभिप्राय सिद्ध न होगा। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि खण्ड 3 को हटा देना चाहिये। ''सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी'' इन शब्दों के रखने से और जटिलतायें बढ़ सकती हैं और इस स्थिति को अभी बुलावा देने की हमें जरूरत नहीं।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस भाग का खंड 1 अवश्य ही आपत्तिजनक नहीं है। मैं समझता हूं कि सभा को उसे मंजूर कर लेने में कोई कठिनाई न होगी। पर इसकी स्वीकृति के परिणामस्वरूप मैं समझता हूं कि कुछ परिस्थितियां आ जायेंगी। इसलिये इन परिणामजन्य स्थितियों की ओर मैं आपका तथा इस गौरवशाली सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। यह खण्ड अर्थात् भाग 4 का खण्ड यह कहता है:

''इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रांत में कोई व्यक्ति गवर्नर के पद पर हो तो वह पदासीन रहेगा और इस विधान के अधीन उस समय तक प्रान्त का गवर्नर समझा जायेगा जब तक कि इस विधान के अधीन नियमित रूप से निर्वाचित उसका उत्तराधिकारी पदासीन न हो जाये।''

इस समय हम दासता के अन्धकार से स्वतंत्रता के प्रकाश की ओर बढ़ रहे हैं। हम अपनी औपनिवेशिक स्वाधीनता की स्थिति से बढ़कर पूर्ण स्वतंत्र प्रजातंत्र की प्राप्ति करेंगे, जिसके लिये हम सतत् प्रयत्नशील हैं। यह अन्तर्वतीकाल में शासन व्यवस्था के अभाव की स्थिति का उत्पन्न हो जाना अवश्यम्भावी है। यह स्थिति दीर्घकालीन अथवा अल्पकालीन हो सकती है। और आज और विधान

के प्रारम्भ करने में फिर एक व्यवधान पड़ जायेगा। विधान के प्रारम्भ करने से मेरा मतलब है विधान के प्रकाश में आने से। मैं समझता हूं कि इस साल के अन्त तक विधान प्रकाश में आयेगा, यानी घोषित हो जायेगा। और इस व्यवधान काल में हम एक नयी स्थिति में औपनिवेशिक स्वराज्य की स्थिति में प्राप्त रहेंगे। आगामी महीने की 15 तारीख को भारतीय राज्य संघ, स्वराज्य प्राप्त उपनिवेश का दर्जा बाजाब्ता प्राप्त करेगा। अतः इस खण्ड के अनुसार दिसम्बर में जबकि सम्भवतः विधान घोषित होगा, कई प्रान्तों में कुछ गवर्नर होंगे जो सम्भवतः अपने पदों पर आसीन रह जायेंगे और इस विधान के अन्तर्गत वे गवर्नर समझे जायेंगे। मैं यहां अपने इस शब्दों ''इस विधान के अन्तर्गत वे गवर्नर समझे जायेंगे'' पर जोर देना चाहता हूं। मैं समझता हूं कि प्रस्तुत विधान के अनुसार इस विधान के प्रारम्भ किये जाने और उसके अन्तर्गत नया चुनाव होने तक अगर कोई परराष्ट्रीय नागरिक गवर्नर रहने दिया जाता है तो इससे विधान की प्रतिष्ठा पर आघात पहुंचेगा। जैसा कि हम सभी जानते हैं, शीघ्र ही आगामी माह के मध्य में हमें अथवा हमारे नेताओं को यह क्षमता प्राप्त हो जायेगी कि वे यह समझ सकें कि किस प्रान्त का कौन गवर्नर होगा। यदि दुर्भाग्यवश कोई परराष्ट्रीय नागरिक अंग्रेज या यूरोपियन 15 अगस्त को किसी प्रान्त में गवर्नर रह जाता है या नियुक्त किया जाता है, तो इसका नतीजा यह होगा कि दिसम्बर में जब विधान बाजाब्ता चालू किया जायेगा वे अपने पदों पर रहेंगे और तब तक रहेंगे जब तक कि इस विधान के अन्तर्गत चुनाव न हो जायें और उनके उत्तराधिकारी पदासीन न हो जायें। अतः श्रीमान्, मेरा यह कहना है कि सर्वसत्ता सम्पन्न सभा होने के नाते तथा शीघ्र ही सर्वसत्ता प्राप्त व्यवस्थापिका होने की अभिलाषा रखने के कारण हम इस स्थिति की कल्पना नहीं कर सकते और न इसे सहन कर सकते हैं। भारत में विदेशी सत्ता का अन्त देखने के लिये हमने कई वर्षों से दशाब्दियों से घोर संघर्ष किया है। कुछ महीने कम पांच साल पहले हमने ''भारत छोड़ो'' का क्रांतिकारी आन्दोलन शुरू किया था और यह भाग्य की ही बात है कि उसी अगस्त महीने में हम अगर पूर्ण स्वतंत्रता नहीं तो औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त करने जा रहे हैं, और मुझे आशा है कि हमें बहुत कुछ स्वतंत्रता और बहुत कुछ अधिकार प्राप्त हो जायेंगे। इस तरह श्रीमान्, जब अपना गवर्नर नियुक्त करने का अधिकार हमारे हाथ में आ रहा है तो मेरा अपना विचार यह है कि भारतीय राज्य संघ के हमारे अपने नागरिक ही नवीन विधान का प्रयोग आरम्भ होने पर गवर्नर बनाये जायें। परिवर्तन कालीन व्यवस्था या आदेश के इन शब्दों की ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं।

[श्री एच.वी. कामत]

''इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रान्त में.....।'' हमें सतत सावधान रहना चाहिये कि इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले सभी प्रांतों में भारतीय नागरिक ही गवर्नर के पदों पर आसीन रहें न कि परराष्ट्रीय नागरिक। क्या हमने इतने कष्ट केवल इसलिये सहे हैं, शासकों से इतनी बार केवल इसलिये संघर्ष किया है कि इन तीखे शासकों को, मिथ्या उपाधिकारियों को तथा विदेशी साम्राज्यवाद के इन तुच्छ भृत्यों को ही अपने प्रांतों में शासन करते देखें? मैं इसका अन्त देखना चाहता हूं। मैं वह दिन नहीं देखना चाहता जबकि इस विधान के प्रयोग में आने के बाद भी वही यूरोपियन, जिनसे हम पांच साल पहले भारत छोड़ने की मांग करते थे, हमारे कुछ प्रांतों में शासक बने रह जायें। कुछ दिनों पहले एक सर्वसाधारण नागरिक को यह समझाने में मुझे बड़ी माथापच्ची करनी पड़ी कि लार्ड माउन्टबैटन को क्यों भारतीय उपनिवेशों के गवर्नर-जनरल बनाने की सिफारिश की गयी। कूटनीति, राजनीतिक कौशल युक्ति के विचार से प्रेरित होकर ही हमारे नेताओं ने भारत के गवर्नर-जनरल के पद के लिए लार्ड माउन्टबैटन के नाम की सिफारिश की है और हम उनके इस विचार को तो समझ सकते हैं और उसकी तारीफ करते हैं; पर साधारण नागरिक तो यह सब नहीं समझ सकता। यह सच है कि हम सर्वसाधारण नागरिकों के मतानुसार ही सदा नहीं चल सकते पर साथ ही यह भी सच है कि गणतंत्र में सर्वसाधारण नागरिकों के मनोभावों को भी स्थान दिया जाता है। गणतंत्र के स्वरूप निर्माण में सर्वसाधारण नागरिक के मनोविचारों की छाया का जबरदस्त हाथ हुआ करता है। अन्त में मैं माननीय प्रस्तावकर्त्ता से तथा इस सभा से अनुरोध करूंगा कि वे इन बातों पर ख्याल करें और ऐसा करें कि इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले किसी प्रांत का गवर्नर अभारतीय न हो बल्कि अपने आदमी, अपने नागरिक ही गवर्नर रहें। हम सर्वसाधारण नागरिक के मन में केवल तभी वांछनीय मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया पैदा कर सकते हैं जब हम इन बातों की ओर ध्यान दें। यदि स्वातंत्र्य सूर्य के उदित होने पर भी दुर्भाग्यवश भारत भूमि में हम एक विदेशी को ही शासक या गवर्नर की तरह अकड़ कर चलते देखेंगे तो हम यह वांछनीय मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया नहीं उत्पन्न कर सकते। हमारा ''भारत छोड़ो'' संबंधी प्रस्ताव तेजी से फलीभूत होता जा रहा है। ऐसे समय में सर्वसाधारण नागरिकों के मन में हमें यह धारणा पैदा करनी चाहिये कि ''भारत छोड़ो'' आन्दोलन की समाप्ति पर, जिसे हमने आज से पांच साल पहले आरम्भ किया था, सारे अधिकार हमारे हाथ आ गये हैं। नान्यः पन्था अयनाय विद्यते। जब हम शीघ्र ही स्वाधीनता का आलोक प्राप्त करने जा रहे हैं तो हमें इस बात के लिये महान् प्रयास करना चाहिये। सर्वसाधारण भारतीय यह समझे

कि अब हम ही अपने भाग्य विधाता हैं और हम पर किसी विदेशी का शासन नहीं रह गया है। जितने ही जल्दी हम इस दशा में प्रयास करेंगे; उतना हमारा और हमारे मुल्क का भला है। यदि हम इसमें सफल होते हैं तो शक्ति समुन्नति करने का बहुत कुछ काम कर लेते हैं जो भारतीय राज्यसंघ के निर्माण के लिये परमावश्यक है। मुझे विश्वास है कि ऐसा कहकर मैं इस सभा के बहुमत की भावना ही व्यक्त कर रहा हूं। मैं सभा की गतिविधि को ध्यान से देख रहा हूं। हमें इस बात की पूरी सावधानी रखनी चाहिये कि प्रांतीय विधान के अमल में आने के समय किसी भी प्रांत में कोई भी विदेशी गवर्नर न रहे। उस दिन के बाद किसी भी विदेशी को गवर्नर रहने देना बड़ी भूल होगी।

श्रीमान्, केवल उन शब्दों को कहकर ही अपनी बात समाप्त कर दूंगा जो एक अन्य ऐतिहासिक अवसर पर कहे गये थे और सभा से अनुरोध करूंगा कि वह भी विदेशियों से कह दे: ''पांच साल पहले हमने आपको भारत छोड़ने के लिये कहा था। आज हम और अधिक अधिकार और क्षमता प्राप्त कर आपसे कहते हैं कि भगवान के लिये आप यहां से चले जाइये। भारत को उसके भाग्य पर छोड़ दीजिये। उसे एक दृढ़ स्वतंत्र और सर्वसत्तासंपन्न प्रजातंत्र बनने दीजिये।'' ''जयहिंद''।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** परिवर्तनकालीन व्यवस्थाओं के सम्बन्ध में मैं चन्द शब्द कहना चाहता हूं। ये व्यवस्थायें पूर्णत: परिवर्तनकालीन ही होनी चाहिये। मेरी अपनी यही इच्छा है। विधान निर्माण से सम्बन्ध रखने वाले सभी लोग शीघ्र आवश्यक कामों को समाप्त कर देंगे ताकि 26 जनवरी को हमें भारतीय स्वतंत्रता प्राप्त हो जाये और उस दिन से हम स्वतंत्र विधान के अन्तर्गत कार्य करना प्रारंभ कर दें। जहां तक वर्तमान गवर्नरों के बने रहने की बात है, मुझे विश्वास है कि वे तभी तक गवर्नर रहेंगे जब तक कि जरूरत है, उसके बाद नहीं। जब नया विधान अमल में आ जायेगा तो मुझे उम्मीद है कि अपने राष्ट्र के नागरिक ही गवर्नर नियुक्त किये जायेंगे।

तीसरी बात यह है कि विधान बन जाने के बाद नया चुनाव करने में तथा निर्वाचन क्षेत्रों को बनाने में वुछ समय लगेगा। इन सभी कामों में कुछ समय लगेगा। मैं कोई निश्चित तिथि तो नहीं निर्धारित करना चाहता जिसके अंदर नवीन विधान के अनुसार चुनाव कर लिये जायें। पर साथ ही मैं इस बात पर जरूर जोर देता हूं कि नया विधान बन जाने के बाद हमें अवश्य ऐसा करना चाहिये। छ: माह के अंदर उससे ज्यादा नहीं, नवीन विधान पूरी तरह काम करने लगे। विधान निर्माण

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

के पहले भी, चूंकि हमने बालिग मताधिकार का सिद्धांत स्वीकार कर लिया है, हमें वर्तमान प्रांतीय सरकारों को आदेश दे देना चाहिये कि वे प्रत्येक नगर और ग्राम के बालिगों की वोटर सूची तैयार करें। उसके बाद निर्वाचन क्षेत्रों को बनाना होगा। हमें इस दिशा में कोई भी प्रयास नहीं छोड़ना चाहिये और हरचंद यह कोशिश करनी चाहिये कि नवीन विधान यथा-शीघ्र प्रयोग में आये। इन शब्दों के साथ मैं इन परिवर्तनकालीन व्यवस्थाओं का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** और भी कोई सदस्य इस सम्बन्ध में बोलना चाहते हैं?

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान्, मैं माननीय सरदार पटेल को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने कम से कम समय में रिपोर्ट तैयार कर ली है। बधाई देने के साथ मैं यह कहूंगा कि नव-निर्मित विधान के अंतर्गत प्रांतों को उससे कम अधिकार दिये गये हैं जो उन्हें सन् 1935 ई. के एक्ट द्वारा प्राप्त थे।

हम तो यह आशा करते हैं कि नये विधान में हुकूमत जनता की और जनता के लिये होगी। अब इन नारों का कोई मतलब नहीं रह जायेगा, यदि प्रांतों में वहां के जननायकों का गवर्नर न रहे। श्रीमान्, इस अंतर्काल को आज से लेकर नवीन निर्वाचन तक के समय को सिविल सर्विस वाले व्यक्तियों को ही गवर्नर रखकर हमें व्यर्थ या कष्ट प्रदत्त नहीं बना देना चाहिये। लार्ड माउन्टबैटन को गवर्नर जनरल बनाने का जो निर्णय किया गया है, मैं उसका समर्थन करता हूं। इसके लिये संभव है कि कोई गंभीर कारण और औचित्य हो। इस मामले में समस्त देश नेताओं के साथ है। पर श्रीमान्!, यही बात प्रांतों में नहीं की जा सकती। मैं यहां राष्ट्रीय नागरिक और परराष्ट्रीय नागरिक के बीच अंतर की बात बताने के लिये नहीं खड़ा हुआ हूं। मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि वे लोग जो जनता के नौकर (Public Servants) थे, गवर्नर पद पर कायम रहें। 'इंडियन सिविल सर्विस' के अधिकतर सदस्य भारतीय दृष्टिकोण नहीं रखते और उनको हम किसी भी अर्थ में जनता का नौकर नहीं कह सकते। इस हालत में मैं यह कहूंगा कि देश के लिये यह सहन करना बड़ा ही कठिन होगा कि प्रांतीय शासन व्यवस्था में अब भी वही सिविल सर्विस के आदमी कायम रखे जायें। मुझे विश्वास है कि हमारे नेता यह भूल न करेंगे।

इस कथन के साथ श्रीमान्, मैं प्रस्ताव का पूर्ण समर्थन करता हूं और समिति को बधाई देता हूं कि उसने एक ऐसी रिपोर्ट उपस्थित की जिस पर सभा इतनी एकमत थी कि उसने इतने जल्द उसे मंजूर कर लिया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** अध्यक्ष महोदय, खंड 1 की तीसरी पंक्ति में मैं एक शाब्दिक परिवर्तन का सुझाव देता हूं। ''shall continue'' शब्दों की जगह में ''may be continued'' रखना चाहता हूं। ''इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रांत में कोई व्यक्ति गवर्नर के पद पर हो तो वह पदासीन रखा जा सकता है''–मैं खंड का रूप यह चाहता हूं। इसके बाद ''और'' शब्द के बाद ''when so continued'' शब्द रखना चाहता हूं। ये केवल शाब्दिक परिवर्तन हैं।

मैं सभा को यह याद दिलाना चाहता हूं कि हमारे कई मित्र जिन्होंने अभी स्वास्तिवाचन मूलक भाषण दिये हैं, शायद यह भूल गये हैं कि एक खंड पर विचार करना अभी बाकी है, और वह है खंड 15। यह विवादास्पद खंड है और इसको तय करने में कुछ समय लगेगा।

***श्री सी. सुब्रह्मण्यम** (मद्रासः जनरल): ''पंदासीन रखा जा सकता है'' आप यह रखना चाहते हैं, पर किसके द्वारा? अधिकारी कौन होगा जो नवीन विधान के अंतर्गत उसे गवर्नर पद पर पदासीन रहने देगा?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** अवश्य ही वह भारतीय सरकार है जिसे गवर्नर को नियुक्त करने का अधिकार है। इस सम्बंध में कोई कठिनाई नहीं है।

***श्री एच. वी. कामतः** ''may be continued'' क्यों रखते हैं? ''may continue'' क्यों नहीं रखते।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यदि आप चाहते हैं ''may continue'' ही रखिये।

***डा. पी. एस. देशमुख** (मध्य प्रांत और बरारः जनरल): ''may be continued'' रखना बेहतर है। ''may continue'' रखने से तो यह अर्थ निकलेगा कि उसे पदासीन रहना चाहिये और उससे श्री कामठ का मूल अभिप्राय ही खत्म हो जाता है। ''may be continued'' का अर्थ होगा कि यह पदासीन रहेगा, पर तभी जब सरकार का हुक्म हो।

***अध्यक्षः** इस शाब्दिक परिवर्तन के साथ मैं प्रस्ताव पर मत लेता हूं:

''shall continue'' की जगह पर ''may be continued'' रखा जाये और बाद में ''और'' शब्द के बाद ''when so continued'' रखा जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री मुंशी, आपने यह प्रस्ताव रखा था कि खंड 3 हटा दिया जाये। मुझें खेद है कि मैंने उस पर मत नहीं लिया, पर मैं समझता हूं कि वह मंजूर है।

प्रस्ताव मंजूर हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं समूचे प्रस्ताव पर इस संशोधन के साथ, कि खंड हटा दिया जाये, मत लेता हूं; यह इसलिये कि कुछ गलतफहमी हो गयी थी।

भाग 4 अपने संशोधित रूप में स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने एक संशोधन की सूचना दी है।

(संशोधन नहीं पेश किया गया।)

***अध्यक्षः** एक खंड और था जो छूट गया था; वह था खंड 15। अब हम उसको लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव करता हूं।

''15 (1) अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करने में गवर्नर का निम्नलिखित विशेष उत्तरदायित्व होगा, अर्थात प्रान्त या उसके किसी भाग की शांति को गम्भीर संकट में पड़ने से बचाना।

(2) अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में गवर्नर अपने विवेक से काम करेगाः

परंतु शर्त यह है कि यदि किसी समय अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में वह यह समझे कि कानून द्वारा व्यवस्था करना आवश्यक है, लेकिन ऐसे कानून की व्यवस्था प्राप्त करने में असमर्थ हो तो वह राज्य संघ के अध्यक्ष के पास एक रिपोर्ट भेजेगा जो उस पर ऐसी कार्यवाही करेगा जिसे वह अपने आकस्मिक परिस्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अधीन उचित समझे।''

माननीय सदस्यों को मेरा वह प्रारंभिक भाषण देखना चाहिये जो इस सम्बन्ध में मैंने दिया था। गवर्नर के निजी विवेक सम्बंधी अधिकारों का प्रश्न महत्त्वपूर्ण है और उस पर बड़ी सावधानी से विचार करना होगा। एक तरफ तो इससे मंत्रिमंडल के अधिकारों में कमी आ जाती है। गवर्नर को नौकरियों पर कोई नियत्रंण

नहीं प्राप्त है और अगर उसके विवेक सम्बंधी उत्तरदायित्व के निर्वाह के लिये नौकरियों पर उसे नियंत्रणाधिकार दे दिया जाता है तो यह कल्पना करना भी कठिन है कि मंत्रिमंडल क्या करेगा, और यह तो एक तरह से चालू कानून की दफा 93 को लागू करना होगा।

दूसरी ओर देशव्यापी स्थिति को देखते हुये यह ख्याल भी किया जाता है कि आज देश में जो कठिन स्थिति पैदा हो गई है उसके निराकरण के लिये गवर्नर को विशेष उत्तरदायित्व प्रदान करने की व्यवस्था होनी ही चाहिये। इन सब बातों को देखते हुए इस खंड पर गंभीरतापूर्वक विचार करना आवश्यक है। आशा है कि बहस-मुबाहिसे के सिलसिले में सभी प्रकार के दृष्टिकोण सामने आ जायेंगे। इसलिये मैं इस प्रस्ताव को सभी की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं सहर्ष पूर्वक यह सुझाव देता हूं कि यह सब हम सबों के लिये हितकर होगा यदि हम इस पर विचार कल के लिये स्थगित कर दें। हमारे सामने एक नया संशोधन है जिसकी सूचना भी श्री मुंशी ने दी है और मैं यह वांछनीय समझता हूं कि इस पर सोचने का हमें कुछ समय दिया जाये। इसमें कोई शक नहीं कि हम इस प्रश्न पर कई दिनों से सोच रहे हैं। पर हमारे सामने ठीक-ठीक शक्ल में ऐसा कोई सुझाव नहीं था जैसा कि श्री मुंशी के संशोधन में है। इसलिये मेरा सुझाव है कि हम इस पर कल विचार करें। 12½ बज चुके हैं और अगर हम विचार कल को स्थगित रखते हैं तो इससे सभा का आधे घंटे से ज्यादा समय व्यर्थ नहीं जाता है। आशा है, श्रीमान्, मेरा संशोधन स्वीकार करेंगे और सभा भी स्वीकार करेगी।

***अध्यक्ष:** मैं यह सुझाव देता हूं कि बजाय इसके कि हम आधे घंटे का समय व्यर्थ जाने दें, हम आज अपने संशोधन पेश कर दें, और उन पर कल विचार हो, यदि सभा इसे चाहे तो। इस तरह से सदस्यों को यह अवसर मिल जायेगा कि वे संशोधनों पर तथा उनके उपस्थित करने वाले सदस्यों के भाषणों पर विचार कर सकें, यदि सभा इसे स्वीकार करे।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू:** क्या आपका यह सुझाव है कि संशोधन तो आज पेश कर दिये जायें और उन पर भाषण कल हों?

***अध्यक्ष:** यदि कोई संशोधनकर्त्ता सदस्य यह अधिकार चाहते हैं तो उन्हें यह दूंगा।

***डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): आज इस पर अंतिम रूप से विचार नहीं होना चाहिये।

***अध्यक्ष:** पहला संशोधन है सर्वश्री अजीत प्रसाद जैन, खुरशीदलाल तथा गोपीनाथ श्रीवास्तव का।

(यह संशोधन पेश नहीं किया गया।)

(सर्वश्री के. संतानम्, कालावेंकट राव, एम. अनन्तशयनम् आयंगर, शिब्बनलाल सक्सेना और पं. गोविन्दवल्लभ पंत ने अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये।)

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई: जनरल): श्रीमान् मेरा प्रस्ताव है कि ''खंड 15 के उपखंड 2 का शर्तिया फिकरा निकाल दिया जाये और निम्न उपखंड बढ़ा दिये जायें:

''(3) यदि अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में गवर्नर को इस बात का संतोष हो जाये कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिसमें शीघ्र कार्यवाही की जानी चाहिये तो वह एक घोषणा द्वारा उन सभी अधिकारों को स्वयं ग्रहण कर लेगा जो सिवाय हाईकोर्ट के किसी प्रान्तीय सभा या अधिकारी को प्राप्त हैं या उसके द्वारा प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

(4) घोषणा राज्य संघ के अध्यक्ष को शीघ्र ही भेज दी जायेगी जो उस पर ऐसी कार्यवाही करेंगे जिसे वह अपने आकस्मिक गम्भीर स्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अन्तर्गत आवश्यक समझें।

(5) घोषणा निकलने के बाद दो सप्ताह बीतते ही वह प्रयोग में न रह जायेगी। यदि इससे पहले गवर्नर इसका खंडन न कर दे या राज्य संघ के अध्यक्ष अपने आकस्मिक गम्भीर स्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अन्तर्गत उसका खंडन न कर दें, जो भी पहले हो जाये।''

***अध्यक्ष:** अब पं. हृदयनाथ कुंजरू अपना मन्तव्य व्यक्त करेंगे।

***पं हृदयनाथ कुंजरु:** अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन जिसकी मैंने सूचना दी है, यों है कि:

''खंड 15 के बदले निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'जब भी गवर्नर को इसका निश्चय हो जाये कि प्रांत या उसके किसी भाग की शांति पर जबरदस्त खतरा है तो वह अपने विवेक से राज्य-संघ के अध्यक्ष को इसकी सूचना दे सकता है।

नोट:–राज्य संघ के अध्यक्ष उस सूचना को पाने पर ऐसी कार्यवाही कर सकते हैं जिसे वे अपने आकस्मिक गंभीर स्थिति सम्बन्धी अधिकार के अंतर्गत जरूरी समझें।' ''

श्रीमान् इस सम्बन्ध में मैं अपना भाषण कल दूंगा क्योंकि सभी संशोधनों के पेश कर लिये जाने पर सभी बातों पर विचार करने का मुझे मौका मिलेगा।

***अध्यक्ष:** श्री मुंशी?

श्री के.एम. मुंशी: श्रीमान्, यह संशोधन तो श्री गुप्ते के संशोधन को ही और विस्तृत बनाता है। संशोधन पर मुझे जो कुछ भी कहना है, मैं कल कहूंगा।

***श्री एम.एस. अणे:** श्रीमान्, एक वैधानिक आपत्ति है। श्री मुंशी का संशोधन तो पं. गोविन्दवल्लभ पंत के संशोधन पर है। पर चूंकि पं. पंत ने अपना संशोधन पेश नहीं किया, श्री मुंशी के संशोधन उपस्थित किये जाने का प्रश्न ही नहीं उठता।

***अध्यक्ष:** मैं यह बता दूं कि पं. कुंजरू ने एक संशोधन रखा है जो अक्षरश: पं. पंत के संशोधन से मिलता है।

***श्री एम.एस. अणे:** उस हालत में यहां शब्दों में परिवर्तन होना चाहिये, ''पं. हृदयनाथ कुंजरू ने एक संशोधन रखा है'' यों होना चाहिये।

***श्री के.एम. मुंशी:** मालूम होता है कि अणे साहब ने कागज को ठीक-ठीक नहीं पढ़ा है। मैंने दो संशोधन रखे हैं एक तो पं. पंत के संशोधन पर और दूसरा श्री गुप्ते के संशोधन पर। अब चूंकि पहला संशोधन नहीं पेश किया गया है और श्री गुप्ते ने अपना संशोधन पेश किया है, इसलिये बावजूद श्री अणे की आपत्ति के, मैं नियम के अंदर हूं। संशोधन यह है:

''खंड 15 के बदले में निम्नलिखित अंश रखा जाये :

'1. जहां किसी प्रांत के गवर्नर को निजी विवेक से इस बात का निश्चय हो जाये कि ऐसी गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिससे

[श्री के.एम. मुंशी]

प्रान्त की शान्ति को जबर्दस्त खतरा है और धारा 9 की व्यवस्थाओं के अनुसार मंत्रिमंडल की सलाह से प्रान्तीय सरकार का चलाना सम्भव नहीं है, तो वह घोषणा द्वारा सरकार के सभी या किसी भी कर्तव्य को तथा उन सभी अधिकारों को या उनमें से किसी एक को जो प्रान्तीय संस्था या अधिकारी को प्राप्त हैं या जिनका वे प्रयोग कर सकते हैं, स्वयं ग्रहण कर सकता है। इस घोषणा में आकस्मिक स्थिति तथा परिणामवर्ती स्थिति सम्बन्धी आदेश रखे जा सकते हैं जो घोषणा की उद्देश्य सिद्धि के लिये उसे आवश्यक और वांछनीय मालूम हों और ऐसे आदेश भी जिनसे इस एक्ट के प्रान्तीय संस्था या अधिकारी से सम्बन्ध रखने वाले आदेशों का प्रयोग पूर्णतः या अंशतः स्थगित किया जाता हो:

किन्तु शर्त यह है कि इस उपधारा की किसी भी बात से गवर्नर को यह अधिकार नहीं प्राप्त होगा कि वह हाईकोर्ट को प्राप्त या उसके द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले अधिकारों में से किसी को स्वयं ग्रहण करें या इस एक्ट के हाईकोर्ट सम्बंधी आदेश का प्रयोग पूर्णतः व अंशतः स्थगित करें।

2. गवर्नर इस घोषणा की सूचना फौरन राज्य-संघ के अध्यक्ष को देगा जो उसके पाने पर ऐसी कार्यवाही कर सकते हैं, जिसे वह आकस्मिक स्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अन्तर्गत उचित समझें।

3. दो सप्ताह बीतते ही घोषणा का प्रयोग में आना बन्द हो जायेगा, यदि उससे पहले स्वयं गवर्नर या राज्य संघ के अध्यक्ष इसका प्रत्याख्यान न कर दें'।''

***श्री एच.वी. कामतः** श्री कुंजरू की कानूनी और वैधानिक योग्यता के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए भी मैं यह कहूंगा कि यहां 'satisfied in his discretion' यह शाब्दिक उपयुक्त नहीं है। अपने विवेक से कोई व्यक्ति कुछ कर सकता है पर ''अपने विवेक से संतुष्ट हो जाये'' यह कहना अस्वाभाविक-सा है।

***अध्यक्षः** इस पर विचार अब हम कल के लिये स्थगित रखेंगे।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** श्री कामठ की बात के संबंध में हम कल प्रकाश डालेंगे।

***अध्यक्षः** अब हम एजेंडा के दूसरे विषय पर विचार प्रारंभ कर सकते हैं, यह है संघ-विधान संबंधी समिति की रिपोर्ट। पं. नेहरू अब अपना प्रस्ताव पेश करेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** राष्ट्रीय पताका के संबंध में पं. नेहरू जो प्रस्ताव पेश करने वाले हैं उसकी सूचना हमें कल रात को मिली। कृपया यह बताइये कि इस प्रस्ताव पर आप संशोधन कब तक लेंगे?

***अध्यक्षः** चूंकि प्रस्ताव की सूचना आपको कल रात को मिल चुकी थी, आपको अब तक अपना संशोधन दे देना चाहिये था। अस्तु, यदि आपने अब तक संशोधन नहीं भेजा है तो आज शाम 5 बजे दे दीजिये।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): संघ-विधान सम्बन्धी रिपोर्ट पर मेरा एक संशोधन है, पर मैं उसका जिक्र नहीं पाता हूं। डा. देशमुख का एक संशोधन है। अपना संशोधन भी मैंने इसीके साथ दिया था।

***अध्यक्षः** ये संशोधन मेम्बरों में घुमा दिये गये हैं, जैसा कि सदस्य जानते हैं। यह संशोधन शनिवार को दोपहर बाद देर से मिला होगा। पर सभी संशोधन यहां रख दिये गये हैं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** श्री देशमुख के संशोधन के दो दिन पहले ही मैंने अपना संशोधन श्री आयंगर को दे दिया था। कार्यक्रम में यह जरूर होना चाहिये और सभी सदस्यों के सामने यह आना चाहिये।

***अध्यक्षः** जब हम उस पर आयेंगे तो विचार करेंगे।

संघ-विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

''निश्चय किया जाता है कि विधान-परिषद अपने 30 अप्रैल, सन् 1947 ई. के प्रस्तावानुसार नियुक्त समिति द्वारा उपस्थित की हुई संघ-विधान के सिद्धान्त सम्बन्धी रिपोर्ट पर विचार करे।''

यह रिपोर्ट सदस्यों में वितरित कर दी गयी है और पूरी रिपोर्ट सदस्यों के पास भेज देने के बाद एक पूरक रिपोर्ट यानी पहली रिपोर्ट को बढ़ाकर एक और

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

रिपोर्ट भी सदस्यों को दे दी जा चुकी है। यह पूरक रिपोर्ट पहली रिपोर्ट से कुछ भिन्न है। यानी इसमें कुछ परिवर्तन कर दिये गये हैं। इस तरह सभा के सामने मैं रिपोर्ट को संशोधित रूप में पेश कर रहा हूं। दो दिन पहले मैंने सदस्यों को इस रिपोर्ट के सम्बन्ध में एक नोट भेजा था और उसमें मैंने यह बताया था कि जहां तक प्रस्तावना और खण्ड 1 के भाग का सम्बंध है, वह सब लक्ष्य सम्बंधी प्रस्ताव में आ गया है। वह प्रस्ताव कायम है। उक्त प्रस्ताव के पास हो जाने के बाद देश में कुछ ऐसी राजनैतिक बातें हुई कि उनके परिणामस्वरूप हो सकता है कि कम आवश्यक मामलों में कुछ परिवर्तन करना पड़े।

एक उपसमिति के मस्विदा सम्बन्धी प्रश्न पर विचार करने के लिये कहा गया है। हम लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव को कतई नहीं बदलने जा रहे हैं। मैं जो चाहता हूं, वह यह है कि इसे प्रस्तावना के अनुरूप बना दिया जाये। लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव तो एक ऐतिहासिक चीज है और हम उन सभी सिद्धान्तों पर दृढ़ हैं जो इसमें निर्धारित किये गये हैं। इसे प्रस्तावना के अनुरूप बनाने में कुछ परिवर्तन करने ही होंगे। इस समय, जैसा कि सभा को मालूम है, हम विधान नहीं बनाने जा रहे हैं बल्कि उन सिद्धान्तों को स्थिर कर रहे हैं जिनके आधार पर विधान बनेगा। इसलिये प्रस्तावना का मस्विदा जरूरी नहीं है। हमने सिद्धान्तों को स्थिर कर लिया है। इसलिये मैंने नोट में यह कहा था कि शायद इस मसले पर हम विचार न करें।

दूसरे भाग में नागरिकता सम्बन्धी प्रश्न पर विचार किया गया है और उस पर उस समिति ने अभी अपना अन्तिम फैसला नहीं किया है। तीसरे भाग में मौलिक अधिकारों का जिक्र है और यह सभा उस पर विचार कर उसे स्वीकार कर चुकी है। इसलिये मैं यह सुझाव दूंगा कि अब हम इस रिपोर्ट के भाग 4 अध्याय 1 संघ शासन प्रबन्ध पर विचार कर सकते हैं। भाग 1 और 2 में कुछ छोटी-मोटी बातें हैं जिन पर आपको विचार करना पड़ सकता है। इन एक या दो मामूली बातों पर विचार करना जरूरी नहीं है। बेहतर होगा कि हम भाग 4 पर विचार करना प्रारम्भ करें और बाकी पर बाद में विचार करें।

मैंने अभी-अभी कहा है कि यह सभा मौलिक अधिकारों पर विचार कर उन्हें स्वीकार कर चुकी है। हमने जो कुछ भी पास किया है वह सब अन्तिम रूप से विचार करने के लिये सभा के सामने फिर आयेगा। सभा में कुछ नये सदस्य आ गये हैं और उनमें से कुछ लोगों ने मुझसे कहा कि जब मौलिक अधिकार स्वीकार किये गये थे वो सभा में मौजूद नहीं थे। यह तो बिल्कुल सही है, पर यह हमारे

लिये मुश्किल है कि हम बार-बार पीछे जायें और फिर से काम शुरू करें। मैं इसे ठीक नहीं समझता। पर यह तथ्य है कि सभी बातें अन्तिम रूप से स्वीकार करने के लिये सभा के सामने फिर आयेंगी और प्रत्येक सदस्य का हक होगा कि वह उस समय कोई सुझाव दे या उसके किसी हिस्से में कोई संशोधन रखे। इसलिये श्रीमान्, मेरा सुझाव है कि हम भाग 4 अध्याय 1 पर विचार प्रारम्भ करें। यदि आपके पास छपी प्रति मौजूद है तो आप पृष्ठ 5 पर देखिये। यह भाग शासन प्रबन्ध से शुरू होता है।

रिपोर्ट काफी लम्बी है। रिपोर्ट के अन्त में एक परिशिष्ट दिया गया है जो न्याय विभाग के सम्बन्ध में है। सर्वोच्च न्यायालय की तदुद्देश्य सम्बन्धी समिति की यह रिपोर्ट है। यह केवल आपकी जानकारी के लिये कह रहा हूं क्योंकि, कम या बेशी, ये निर्णय इस रिपोर्ट में आ गये हैं।

चूंकि विधान राष्ट्र का बुनियादी कानून होगा, यह बड़ा ही जटिल और महत्वपूर्ण मसला होगा और स्पष्ट है कि इस बिना पर पूरी तरह और काफी समय तक सोच विचार किये हम इसे जल्दी में नहीं पास करेंगे। मैं सभा को बता दूं कि जहां तक संघ विधान समिति का संबंध था उसने काफी और ध्यान देकर विचार किया और न सिर्फ एक बार बल्कि कई बार। कई मौकों पर हम प्रान्तीय विधान समिति से भी मिले और यह रिपोर्ट हमारे सम्मिलित परामर्श का फल है, पर विशेषत: इसमें संघ-विधान समिति का ही कृतित्व है।

मुझे अभी-अभी संशोधनों की सूची मिली है। इसमें 228 संशोधन हैं। मुझे बताया गया है कि सब मिलाकर संशोधनों की संख्या एक हजार तक पहुंचती है। मैंने अभी तक उनमें से किसी को नहीं देखा है। उनके सम्बंध में अभी विचार करना तो मेरे लिए मुश्किल है। इस सम्बन्ध में मैं सभा की इच्छानुसार चलूंगा।

इस समय अगर मुझे कहना है तो वह यह है कि हम भाग 4 शासन प्रबन्ध से विचार करें। पहली चीज जो आती है वह यह है कि संघ के अध्यक्ष का चुनाव कैसे हो। मैं समझता हूं कि इस सम्बन्ध में कई विचार हैं। सम्भवत: इस खास विषय पर हम अभी विचार करें। यह एक सरल विषय है। इस सम्बन्ध में चाहे जिस तरह के विचार हों पर यह एक सरल प्रश्न है और इस पर हम अभी विचार प्रारम्भ कर सकते हैं, इसलिये नहीं कि इसका कार्यक्रम में पहला स्थान है बल्कि इसलिये कि दूसरे बहुसंख्यक संशोधनों में क्या है, इसे बिना जाने भी हम इस पर विचार कर सकते हैं। इन शब्दों के साथ मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं।

श्रीमान्, यदि आपकी अनुमति है तो मैं भाग 4 के पहले विषय को लूं।

***अध्यक्ष:** मैं पहले इस प्रस्ताव पर कि प्रस्तुत रिपोर्ट पर विचार किया जाये, मत लूंगा।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं कह चुका हूं कि पेश्तर इसके कि आप इस रिपोर्ट पर विचार करें, मैं कुछ बातें साफ कर लेना चाहता हूं। इस रिपोर्ट में, जिसे वह एक पूरक रिपोर्ट कहते हैं, पं. जवाहरलाल नेहरू ने कुछ सुझाव दिये हैं। ये केवल उनके सुझाव हैं। क्या मेरे लिये या अन्य सदस्यों के लिये यह आवश्यक है कि उनका सुझाव ही किया जाये? मैं खुद तो इनको नहीं मन्जूर करता हूं।

इसके अलावा इसके लिये मेरे पास जबर्दस्त कारण है। अभी उस दिन पं. नेहरू ने कहा था कि हम लोग लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव पास कर चुके हैं और अभी हम लोग जो भी मस्विदा तैयार करेंगे उसमें युक्त प्रस्ताव हमारे सामने रहेगा।

***अध्यक्ष:** मौलाना साहब, सीधा-सा प्रस्ताव जो मैं इस समय सभा के सामने रख रहा हूं वह यह है कि समिति की रिपोर्ट पर विचार किया जाये। जब यह प्रस्ताव स्वीकार हो जायेगा तो हम एक-एक करके खण्डों पर विचार करेंगे।

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठ** (मद्रास: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, चाहे इस रिपोर्ट पर विचार हो या न हो पर सदस्य तो अपना मत व्यक्त कर ही सकते हैं। इस प्रस्ताव पर बोलने का हक तो हमें है ही। मौलाना साहब इसी प्रस्ताव पर बोल रहे हैं।

***अध्यक्ष:** क्या आपका यह कहना है कि रिपोर्ट पर विचार नहीं किया जाये?

***मौलाना हसरत मोहानी:** हां, मेरा यही कहना है। पं. नेहरू कहते हैं कि लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव पहले भी सभा द्वारा स्वीकृत हो चुका है। मैंने कहा कि उस प्रस्ताव में कोई भी बात स्पष्ट रूप से घोषित नहीं की गई है। प्रस्ताव केवल इतना ही कहता है कि लोकतंत्र होगा। लोकतंत्र एकात्मक होगा या संघ मूलक, यह उसमें नहीं कहा गया है। अगर यह संघ मूलक लोकतंत्र होगा तो यह केन्द्र विमुख रहेगा या केन्द्रोन्मुख, यह बात भी यहां स्पष्ट नहीं है। और जब तक हम इन बातों का निर्णय नहीं कर लेते, प्रान्तीय विधान का नमूना निश्चित करना

व्यर्थ है इसलिये मैंने उस दिन अपने भाषण में कहा था कि आप प्रान्तीय विधान में एक बात को रखना तय कर लेते हैं और प्रान्तीय विधान पास कर लेते हैं। और अगर उस सूरत में हम यह संशोधन रखते हैं कि यह संघ राज्य समाजवादी लोकतंत्र होगा तो आप यह कह सकते हैं कि आप ऐसा नहीं कर सकते, क्योंकि यह बात तो पहले ही तय हो चुकी है। हमने प्रान्तीय विधान स्वीकार कर लिया है और अब आपके लिये कोई गुंजायश नहीं है कि इसके खिलाफ कुछ भी कहें।

श्रीमान्, मुझे डर है कि उस हालत में आपके लिये मेरे संघ-विधान सम्बन्धी संशोधन को अनियमित करार दे देना आसान होगा, जैसा कि आपने अभी उस दिन मेरे मित्र मि. तजम्मुल हुसैन द्वारा प्रस्तावित संशोधन के सम्बन्ध में कह दिया था। फिर तो आप यह कह देंगे कि प्रान्तीय विधान मंजूर हो चुका है, इसलिये आपका संशोधन अनियमित है। आप यह कह देंगे कि रिपोर्ट मंजूर हो चुकी है, इसलिये आपका संशोधन कायदे के बाहर है। यदि यह बात मान ली जाये तो मैं इस समय आपत्ति नहीं करूंगा। तब तो मुझे हक मिल जायेगा कि जब खण्डों पर विचार हो तो हम अपने संशोधन पेश करें या मुझे इस बात का पूरा हक होगा कि मैं लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव का भी विरोध करूं। मेरे पास दो कारण हैं एक तो मैंने खुलासा ही कर दिया है कि इससे किसी भी बात का फैसला नहीं होता है।

***श्री शंकर दत्तात्रेय देव** (बम्बई: जनरल): हम लोग वक्ता की एक भी बात या उनके एक भी विचार को नहीं समझ सके।

***अध्यक्ष** (मौलाना हसरत मोहानी से): कृपया आप ध्वनि विस्तार यंत्र के पास आ जायें।

***श्री जयनारायण व्यास** (जोधपुर): एक विधान-सम्बन्धी आपत्ति है, श्रीमान्। माननीय सदस्य ने तो रिपोर्ट पर विचार करना प्रारम्भ कर दिया है। सभा के सामने सवाल यह है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये या नहीं। इस सवाल पर पहले विचार करना होगा।

***मौलाना हसरत मोहानी:** रिपोर्ट पर विचार करने से पहले अध्यक्ष महोदय को कुछ बातों का खुलासा कर देना चाहिये। अगर मैं रिपोर्ट को मंजूर कर लेता हूं तो मुझे बड़ी असुविधा होगी।

***अध्यक्ष:** जहां तक मैं समझता हूं, मौलाना साहब यह कहते हैं कि मैं उनको इस समय यह वचन दे दूं कि उनका संशोधन अनियमित नहीं घोषित किया जायेगा।

[अध्यक्ष]

यह साफ है कि जब तक मसला सामने न आ जाये, मैं किसी भी सदस्य को कोई भी वचन नहीं दे सकता। पर आप सभी ने यह देखा होगा कि मैं संशोधन पेश करने की अनुमति देने में बड़ा उदार हूं भले ही संशोधन समय के बाद आया हो, जब तक कि कोई बारीक कानूनी वजह न हो। मैं नहीं समझता कि उनके संशोधन को मैं क्यों अनियमित करार दे दूंगा। इस समय मैं इससे अधिक कुछ नहीं कह सकता। मौलाना साहब जैसा चाहते थे, मैंने एक तरह का वचन उन्हें दिया है। मैं समझता हूं कि सभा की इच्छा यह है कि रिपोर्ट पर विचार प्रारम्भ हो।

***अनेक माननीय सदस्यः** हां, हां।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुरः** जो तजवीज़ आपने रखी है उसके संबंध मे मैं एक शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मैं इस पर मत ले चुका हूं और वह स्वीकृत हो गया है।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मेरा सुझाव है कि हम भाग 4 अध्याय 1 से रिपोर्ट पर विचार प्रारम्भ करें।

''खण्ड 1 (1) संघ का प्रधान राष्ट्रपति (प्रेसीडेंट) होगा जो निम्नलिखित व्यवस्था के अनुसार चुना जायेगा।

2–चुनाव निर्वाचक मंडल द्वारा होगा जिसमें ये होंगे–

क–संघ की लोक प्रतिनिधि सभा पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के सदस्य।

ख–सभा प्रदेशों की इकाइयों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्य या, जहां व्यवस्थापिका द्विसभामूलक है, उसके नीचे वाली सभा के सदस्य।

प्रदेशों के प्रतिनिधित्व में समता स्थापित करने के लिये उनकी व्यवस्थापिकाओं के मतों को सम्बन्धित प्रदेशों की जनसंख्या के अनुपात से वजन दिया जायेगा।

व्याख्याः प्रदेश, इकाई का मतलब प्रान्त या देशी रियासतों से जो अपने निजी अधिकार के आधार पर संघ की लोक प्रतिनिधि सभा के

लिये प्रतिनिधि चुनते हैं। देशी रियासतों में जहां राज्य-परिषद् कौंसिल आफ स्टेट के प्रतिनिधि निर्वाचन के लिये उनकी गुटबन्दी की गयी है, वहां प्रदेश का मतलब है उस गुट से जो इस तरह बना है और प्रदेश की व्यवस्थापिका का मतलब है उस गुट की सभी रियासतों की व्यवस्थापिकाओं से।

3—राष्ट्रपति का निर्वाचन ग्रुप मत पत्र द्वारा तथा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मतपद्धति से होगा।

4—उपरोक्त आदेशों के अधीन राष्ट्रपति के निर्वाचन की व्यवस्था, संघ की लोक प्रतिनिधि सभा द्वारा बनाये गये कानून के अनुसार की जायेगी।''

अब श्रीमान्, हमें प्रारम्भ में ही एक बात का निर्णय कर लेना है और वह यह है कि हमारी शासन पद्धति का स्वरूप क्या होगा? क्या हमारी शासन पद्धति ऐसी होगी, जहां मन्त्रिमण्डल पर ही सम्पूर्ण दायित्व है या ऐसी जहां राष्ट्रपति ही शासन व्यवस्था का कर्ताधर्ता होता है, जैसी कि अमेरिका में है? बहुतेरे सदस्य तो सम्भवत: इस अप्रत्यक्ष निर्वाचन की बात देखकर ही उस पर आपत्ति करें और बालिग मताधिकार के आधार पर चुनाव का किया जाना पसन्द करें। इस मसले पर हमने गम्भीर चिन्तन किया है और इस दृढ़ निश्चय पर पहुंचे हैं कि ऐसा करना वांछनीय न होगा। पहले तो इसलिये कि हम, मंत्रिमण्डल मूलक शासन पद्धति पर ही जोर देना चाहते हैं। हम इस बात पर जोर देना चाहते हैं कि वस्तुत: शक्ति मन्त्रिमण्डल और व्यवस्थापिका में सन्निहित है न कि राष्ट्रपति में। पर साथ ही हम यह भी नहीं चाहते थे कि राष्ट्रपति केवल काठ की मूरत हो; यानी नाममात्र का प्रधान हो जैसा कि फ्रांस का होता है। हमने उसे कोई वास्तविक क्षमता तो नहीं दी है पर उसके पद को बड़ी ही मर्यादा और क्षमता सम्पन्न बनाया है। विधान के इस मस्विदे में आप देखेंगे कि अमेरिका के राष्ट्रपति की तरह यह समूची रक्षा सेना का प्रधान नायक है। इसलिये ऐसी हालत में यदि हम बालिग मताधिकार के सिद्धान्त पर उसका निर्वाचन करते और फिर भी उसे यदि कोई वास्तविक अधिकार न देते तो यह बात कुछ नीति विरुद्ध होती, और इसमें बहुत धन, समय और शक्ति लगानी पड़ती, जिसका हमें कोई अनुरूप फल नहीं मिलता। व्यक्तिगत रूप से मैं लोकतंत्रीय पद्धति से पूर्णत: सहमत हूं, पर इसमें अति हो जाती है और मुझे डर होता है कि अगर इतना समय बर्बाद करेंगे तो हमारे पास सिवा इसके कि चुनाव की तैयारी और चुनाव करें और किसी काम के लिये समय न बच पायेगा। शासन-व्यवस्था के लिये हमें काफी चुनाव करने

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

पड़ेंगे। बालिग मताधिकार के सिद्धान्त पर हमें संघीय व्यवस्थापिका का चुनाव करना होगा। और ऊपर से यदि हम यह व्यवस्था भी कर देते हैं कि राष्ट्रपति के चुनाव में भारत का हर वयस्क नागरिक भाग लेगा तो यह बड़ा ही भारी बोझ हो जायेगा। आर्थिक दृष्टि से यह एक बड़ा ही कठिन काम होगा तथा इससे वर्ष भर के लिये हमारे सारे कार्य अव्यवस्थित हो जायेंगे। अमेरिका में राष्ट्रपति के निर्वाचन से वस्तुतः कई महीनों तक बहुत से काम बन्द हो जाते हैं। यह मेरा काम नहीं है कि मैं अमेरिकन पद्धति या किसी अन्य पद्धति की आलोचना करूं। हर देश अपनी इच्छानुसार पद्धति अपनाता है। मैं यह जरूर सोचता हूं जहां अमेरिकन प्रणाली में गुण हैं, वहां अनेक दोष भी हैं। अमेरिका से हमारा कोई मतलब नहीं, इस समय हमारा मतलब है हिन्दुस्तान से और मैं इस बात को खूब समझता हूं कि अगर हम इस देश में इस पद्धति को ही अपनाने की कोशिश करेंगे तो मन्त्रिमण्डल मूलक शासन व्यवस्था को यहां विकसित होने से रोकेंगे तथा अपने समय और शक्ति की बड़ी बर्बादी करेंगे। कहा जाता है कि राष्ट्रपति के निर्वाचन में सम्पूर्ण अमेरिका की सारी शक्ति और सारा ध्यान निर्वाचन में केन्द्रित हो जाता है और इससे देश की एकता को हानि पहुंचती है। एक व्यक्ति समस्त राष्ट्र का प्रतीक बन जाता है। हमारे देश में भी राष्ट्रपति राष्ट्र का प्रतीक होगा, परन्तु मैं समझता हूं कि हमारे राष्ट्रपति का ऐसा निर्वाचन हमारे लिये बुरी बात होगी।

कुछ लोगों ने यह कहा है कि हमने जिस निर्वाचन प्रणाली को रखा है वह जटिल प्रणाली भी क्यों रखी जाये? क्यों न केन्द्रीय व्यवस्थापिका ही राष्ट्रपति चुन ले? अवश्य ही यह बहुत सरल होगा पर इसमें यह खतरा है कि इससे बड़ी संकीर्णता आ जायेगी। केन्द्रीय व्यवस्थापिका में एक दल या गुट प्राधान्य हो सकता है। या यों कहिये कि होगा ही और वह दल या गुट का मंत्रिमण्डल बनायेगा। अगर वह दल या गुट राष्ट्रपति का निर्वाचन करता है तो अवश्य ही वह अपने ही दल के किसी व्यक्ति को राष्ट्रपति चुनना चाहेगा। ऐसा राष्ट्रपति कठपुतली से अन्यथा क्या होगा। राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल दोनों एक ही बात व्यक्त करेंगे। यदि ऐसा न हो तो भी यह सम्भव है कि राष्ट्रपति उसी दल, गुट या विचार-धारा का प्रतिनिधित्व करेगा जिससे मन्त्रिमण्डल सम्बन्धित हो। परन्तु हमने एक बीच का रास्ता अपनाया है और सम्पूर्ण भारत के सभी प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्यों को मतदाता बनने को कहा है; बहुत सम्भव है कि वे लोग अपने ही दल के आदमी को चुने। अवश्य ही इसकी सदा सम्भावना है। जो भी हो केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा

राष्ट्रपति चुने जाने की व्यवस्था को संकीर्ण होने के कारण हम एकदम ही नामंजूर कर सकते हैं। राष्ट्रपति का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर हो, इसके लिये किसी न किसी प्रकार का निर्वाचक मण्डल का बनाना आवश्यक है। यह सुझाव दिया गया है कि हम ऐसा निर्वाचक मण्डल बनायें जिसमें सभी तरह के लोग आ जायें, जैसे म्युनिसिपैलिटी, जिला बोर्ड आदि के सदस्य। मैं समझता हूं कि ऐसा करने में कोई लाभ नहीं है, बल्कि इससे और उलझन पैदा होगी। इससे यह होगा कि निर्वाचक मण्डल बनाने के लिये हमें बहुतेरे छोटे-छोटे चुनाव करने पड़ेंगे। विभिन्न व्यवस्थापिकाओं में तो आपका यह निर्वाचक मण्डल पहले से तैयार कर लिया गया है; अर्थात् सारे भारतवर्ष की व्यवस्थापिकाओं के सदस्यों की सूची प्रस्तुत ही है। शायद उनकी कुल संख्या कुछ हजार हो। यह माना जायेगा कि व्यवस्थापिकाओं के ये सदस्य ऐसी स्थिति में हैं कि वे राष्ट्रपति के निर्वाचन के सम्बन्ध में उम्मीदवार की योग्यता की परख ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं, बनिस्बत उस वृहदकार निर्वाचक मण्डल के जिसमें म्युनिसिपैलिटी और जिला बोर्ड आदि के सदस्य होंगे। इसलिये सभा से मैं कहूंगा कि इस समिति ने इस सम्बंध में जो व्यवस्था बताई है वह सहज साध्य है और एक सही व्यवस्था है और उसके जरिये हम एक योग्य व्यक्ति को चुन सकेंगे जिसकी क्षमता और प्रतिष्ठा का देश और विदेश दोनों में ही आदर हो।

आप देखेंगे कि यह व्यवस्था चुनने में हमने इस बात का ध्यान रखा है कि मतों को वजन दिया जाये; क्योंकि जैसा कि नोट में समझा गया है, हो सकता है कि व्यवस्थापिकाओं में सम्बन्धित प्रदेश की जनसंख्या के हिसाब से प्रतिनिधित्व न प्राप्त हो। संयुक्त प्रान्त या मद्रास की व्यवस्थापिका में हो सकता है 300 सदस्य हों और करीब 5½ करोड़ या 6 करोड़ आबादी का प्रतिनिधित्व करते हों। मुझे ठीक-ठीक मालूम नहीं है। अन्य-अन्य व्यवस्थापिकाओं में 50-50 सदस्य हों सकते हैं, जो 50 हजार व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करते हों। इन सबके मतों को एक-सा वजन दिया जाये यह बड़ी बेतुकी बात होगी। इसका नतीजा यह होगा कि देश के कुछ छोटे-छोटे प्रदेशों का ही इस मामले में प्राधान्य हो जायेगा। इसलिये मत को वजन देने की बात नहीं रखी गयी है और सावधानी से एक ऐसी योजना बनानी होगी जिससे कि सम्बन्धित प्रदेश की जनसंख्या के अनुपात से ही वहां मत लिये जायें।

इन शब्दों के साथ श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्ष:** कल इस प्रस्ताव पर आये हुये संशोधनों को हम लेंगे और इस पर वाद-विवाद प्रारम्भ करेंगे।

[अध्यक्ष]

उठने के पहले मैं एक बात की घोषणा कर देना चाहता हूं। संघ-विधान समिति की रिपोर्ट हमें मिल गयी है और सदस्यों को भी यह भेजी जा चुकी है। सदस्य अपने संशोधन परसों यानी बुधवार ता. 23 जुलाई को 5 बजे शाम तक दे सकते हैं।

***माननीय कुछ सदस्यः** हमें रिपोर्ट की प्रति नहीं मिली है।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि रिपोर्ट सदस्यों को दे दी गई है और वस्तुतः यह दो बार उनमें घुमाई जा चुकी है। फिर भी अगर किसी सदस्य को यह नहीं मिली है तो वे इसे अभी ले सकते हैं।

***माननीय सदस्यगणः** हम आगामी अधिवेशन की समय-सूची जानने के लिये चिन्तित हैं। क्या हम संशोधनों की सूचना बृहस्पतिवार को शाम तक स्थगित रख सकते हैं?

***अध्यक्षः** हां, संघ-विधान समिति की रिपोर्ट पर अपने संशोधन की सूचना आप बृहस्पतिवार, 24 जुलाई शाम के 5 बजे तक दे सकते हैं।

इसके बाद सभा मंगलवार, 22 जुलाई, सन् 1947 ई. के प्रातः 10 बजे के लिये स्थगित हुई।

गोपनीय

परिशिष्ट 'क'

No. CA/63/Cons./47

भारतीय विधान-परिषद्

कौंसिल हाउस

नई दिल्ली, 4 जुलाई, 1947

प्रेषक:

पं. जवाहरलाल नेहरू,

सभापति, संघ-विधान-समिति

सेवा में:

अध्यक्ष,

भारतीय विधान-परिषद्

श्रीमान्,

विधान-परिषद् के 30 अप्रैल, सन्, 1947 ई. के प्रस्तावानुसार संघ-विधान सम्बंधी सिद्धांतों पर रिपोर्ट तैयार करने के लिये माननीय अध्यक्ष ने जो कमेटी नियुक्त की थी उसके सदस्यों की ओर से मैं आपकी सेवा में यह संलग्न स्मृति-पत्र भेजता हूं। इसमें कमेटी की सिफारिशें तथा आवश्यक स्थलों पर व्याख्यात्मक नोट दर्ज हैं।

आपका सेवक

जवाहरलाल नेहरू

सभापति

भारतीय विधान-परिषद्

प्रस्तावना: भारतीय विधान के सम्बन्ध में स्मृति-पत्र

हम भारतीय जन सर्वसाधारण की भलाई की कामना से अपने चुने हुये प्रतिनिधियों के द्वारा प्रस्तुत विधान बनाते हैं, इसे अपनाते हैं।

भाग 1

राज्य-संघ की अधिकार-गत भूमि तथा उसकी अधिकार-सीमा

(1) राज्य-संघ का नाम और उसका अधिकारान्तर भूमि-प्रदेश: इस विधान के अनुसार स्थापित राज्य-संघ एक संर्वसत्ता-सम्पन्न स्वतंत्र लोकतंत्रीय राज्य होगा और इसका नाम होगा इण्डिया।

सिवाय उन अन्यथा व्यवस्थाओं के जो इस विधान द्वारा या इस विधान या अन्य किसी संधि या समझौते के अन्तर्गत की गयी हो, फिलहाल सूची 1 में जो प्रदेश शामिल किये गये हैं वे राज्य-संघ की अधिकार-सीमा के अधीन होंगे।

[नोटः—इस विधान के अनुसार स्थापित किये जाने वाला राज्य-संघमूलक होगा, इसलिये यहां 'राज्य-संघ' शब्द का प्रयोग किया गया है।]

राज्य के लिये 'इण्डिया' नाम इसलिये सुझाया गया है, यह बहुत संक्षिप्त और व्यापक है।

'सिवाय उन अन्यथा व्यवस्थाओं के ..... की गयी हो' शब्दों का रखना आवश्यक है क्योंकि ऐसी देशी रियासतें हो सकती हैं जो संघ में सम्मिलित न होने के कारण सूची 1 में न दर्ज हों, पर कुछ विशेष कार्यों के सम्बन्ध में अपने अधिकार संधि या समझौते के द्वारा सौंप दिये हों।

(2) नये प्रदेश को शामिल करनाः राज्य-संघ की लोक प्रतिनिधि सभा समय-समय पर कानून बनाकर सूची 1 में नये प्रदेशों को ऐसी शर्तों पर जिन्हें वह ठीक समझे, सम्मिलित कर सकता है।

[देखियेः—संयुक्त राज्य अमेरिका के विधान की धारा 3 (1) का आर्टिकिल 4 तथा आस्ट्रेलिया विधान की धारा 121 संयुक्त राज्य में यह अधिकार कांग्रेस को प्राप्त है तथा आस्ट्रेलिया में कामनवेल्थ पार्लियामेन्ट को।]

नामकरण के लिये यह बात बता दी जा सकती है कि इस मस्विदे में राज्य संघ के व्यवस्थापक मण्डल को ''पार्लियामेंण्ट'' कहा गया है और प्रदेशों के व्यवस्थापक मण्डल को ''लेजिस्लेचर'' कहा गया है। संघ की पार्लियामेंट में राष्ट्रपति तथा द्विसभात्मक एक राष्ट्रीय परिषद् शामिल होंगे।

(3) नवीन प्रदेशों का निर्माण तथा उनकी सीमा में परिवर्तन संघ की पार्लियामेण्ट कानून बनाकर, प्रत्येक प्रान्त के व्यवस्थापक मण्डल की स्वीकृति से तथा उस कानून से प्रभावित होने वाली प्रत्येक रियासत के व्यवस्थापक मण्डल की स्वीकृति से—

(क) नये प्रदेश का निर्माण कर सकती है;

(ख) किसी प्रदेश का क्षेत्र-विस्तार कर सकती है;

(ग) किसी प्रदेश का क्षेत्र घटा सकती है;

(घ) किसी प्रदेश की सीमा में परिवर्तन कर सकती है;

तथा इसी तरह की स्वीकृति से ऐसी प्रासंगिक और परिणामवर्ती व्यवस्थायें बना सकती है जिन्हें वह आवश्यक और उचित समझे।

[नोट–यह सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 290 के समान है पर क्योंकि इसमें रियासती प्रदेश के प्रांत में सम्मिलित हो जाने की संभावना के संबंध में व्यवस्था की गई है, यह उससे अधिक व्यापक है।]

सूची 1

राज्यसंघ की अधिकार-सीमा के अधीनवर्ती प्रदेश

1. गवर्नरों के प्रान्त

मद्रास,

बम्बई,

पश्चिमी बंगाल,

संयुक्त प्रान्त,

बिहार,

पूर्वी पंजाब,

मध्य प्रान्त और बरार,

आसाम,

उड़ीसा

2. चीफ कमिश्नरों के प्रान्त,

दिल्ली,

अजमेर-मेरवाड़ा,

कुर्ग,

अन्डमान और निकोबार द्वीपसमूह,

पन्थ पिपलोदा।

3. भारतीय रियासतें

(यहां उन भारतीय रियासतों को दीजिये जो संघ में शामिल हो रही हैं या शामिल होने की स्वीकृति दे रही हों।)

(1) एकल रियसतें।

(2) रियासतों के समूह।

[गवर्नरों के तथा चीफ कमिश्नरों के प्रान्त, जो सूची में दिये गये हैं, वो स्वत: भारतीय संघ के अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत आ जायेंगे। भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में इस बात का निश्चय करने के लिये कि उनमें से कौन-कौन सी रियासतें शुरू में सूची में रखी जायें, कोई विधि निर्धारित करनी होगी। सन् 1935 के एक्ट के अनुसार संघ में शामिल होने का प्रमाण वह ''स्वाधिकार-दान-पत्र'' होगा जिसे राजा लोग सम्पादित करेंगे। यदि इस शब्दावली का प्रयोग या इस पद्धति का अपनाना अवांछनीय समझा जाये तो स्वीकृति की कोई विधि निर्धारित करनी होगी।

यदि इस विधान के प्रयोग में आने के पूर्व सूची में दिये हुये किसी प्रान्त का बटवारा हो जाये तो उस हालत में सूची में तद्नुसार परिवर्तन करना होगा।]

भाग 2

नागरिकता

यह भाग नागरिकता सम्बन्धी खण्ड के सम्बन्ध में बनी हुई समिति के निर्णय के अधीन है।

1—नागरिकता: इस विधान के प्रयोग में आने के दिन संघ के अधिकार क्षेत्रान्तर्गत प्रदेशों का अधिवासी प्रत्येक व्यक्ति—

(क) जो उस तारीख से ठीक पहले पांच साल तक, इससे कम नहीं, उन प्रदेशों का साधारण तौर पर बाशिन्दा रह चुका है, या

(ख) जो अथवा जिसके माता पिता या उनमें से कोई इण्डिया में पैदा हुआ हो, वह संघ का नागरिक होगा:

किन्तु शर्त यह है कि ऐसे किसी व्यक्ति को दूसरे राज्य का नागरिक होने के कारण संघीय कानून के अनुसार यह अधिकार होगा कि वह इस खण्ड द्वारा प्रदत्त नागरिकता को अस्वीकार कर सकता है।

व्याख्या: इस खण्ड के अभिप्रायों के लिये–''अधिवासी'' का वही अर्थ होगा जो सन् 1925 के भारतीय उत्तराधिकार कानून (Indian Succession Act) में है।

2–इस विधान के प्रयोग में आने के बाद–

(क) हर व्यक्ति जो उन प्रदेशों में पैदा हुआ है जो संघ के अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत हैं;

(ख) हर व्यक्ति जो संघीय कानून के अनुसार देशीय हो गया हो;

(ग) हर व्यक्ति जिसके माता पिता में से कोई भी उसके जन्म के समय संघ का नागरिक रहा हो,

वह संघ का नागरिक होगा।

3–संघीय नागरिकता की अवाप्ति और परिसमाप्ति के सम्बन्ध में संघीय कानून द्वारा और आदेश बनाये जा सकते हैं।

व्याख्या: जब तक कि प्रसंग (संदर्भ) में अन्यथा आवश्यक न हो, इस विधान में 'संघीय कानून' के अंतर्गत कोई भी वर्तमान भारतीय कानून शामिल है जो संघ के अधिकार-क्षेत्रवर्ती प्रदेशों में प्रयुक्त होता है।

[नोट:–नागरिकता सम्बन्धी व्यवस्थाओं को लेकर निस्संदेह घोर वाद-विवाद चलेगा। वर्तमान मस्विदा तो केवल इसलिये तैयार किया गया है कि इसके आधार पर किया जा सके।]

देखिये–आयरिश फ्री स्टेट के विधान का आर्टिकल 3 जो यों है:

''बिना स्त्री पुरुषगत भेदभाव के इस विधान के प्रयोग में आने के समय आयरिश फ्री स्टेट की अधिकार-सीमा वाले प्रदेश का प्रत्येक अधिवासी व्यक्ति, जो आयरलैंड में जन्मा हो या जिसके माता पिता में से कोई भी आयरलैंड में जन्मा हो या जो आयरिश फ्री स्टेट के अधिकारवर्ती प्रदेश में सात वर्षों से कम

का बाशिन्दा न हो, आयरिश फ्री स्टेट का नागरिक है और आयरिश फ्री स्टेट की अधिकार-सीमा के अन्तर्गत सभी रियायतें उसे प्राप्त होंगी और नागरिकता सम्बन्धी दायित्वों के वह अधीन होगा और वे शर्तें जिनके अधीन आयरिश फ्री स्टेट में नागरिकता की भविष्य में प्राप्ति या समाप्ति होगी, कानून द्वारा निश्चित की जायेंगी।''

खण्ड 1 उपरोक्त व्यवस्था के आधार पर रखा गया है, सिवाय इसके कि बजाय सात वर्ष के यहां सन् 1926 ई. के इण्डियन नैचुरलाइजेशन एक्ट 7 की धारा 3 (1) (ग) के अनसुार पांच वर्ष रखा गया है।

संघ प्रारम्भ में ही सारे इण्डिया पर अपनी अधिकार-सीमा को लागू नहीं करेगा, इस सम्भावना का समुचित ध्यान रखते हुये इस खण्ड की वाक्य-रचना करनी पड़ी है।

इस खण्ड के अनुसार इण्डिया में जन्मा हो और बम्बई का अधिवासी व्यक्ति जो इस नवीन विधान के प्रयोग में आने के समय लण्दन में रहता हो, संघ का नागरिक होगा पर सिंध या बलूचिस्तान का अधिवासी नहीं होगा, अगर संघ प्रारम्भ में ही अपनी सीमा को वहां लागू न करे। पर किसी भी व्यक्ति को अधिकार है कि इस विधान के प्रयोग में आने के पहले, दूसरे इलाके में स्थायी रूप से निवास करके नई नागरिकता के अधिकार प्राप्त करे।

सन् 1925 ई. के इण्डियन सक्सेशन एक्ट के अनुसार हर व्यक्ति का अपना ''मौलिक वासस्थान'' हुआ करता है और नागरिकता के सम्बन्ध में कानूनन उसका यहीं वासस्थान समझा जाता है जब तक कि वह वासस्थान बदल कर नयी नागरिकता न प्राप्त कर ले। संक्षेप में उसका मौलिक वासस्थान वही देश होता है जहां का उसकी पैदाइश के समय उसका पिता अधिवासी हो। दूसरे देश में अपना स्थायी निवास बनाकर वह वहां का अधिवासी बन सकता है। एक्ट में एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति ब्रिटिश इण्डिया की हुकूमत की ओर से प्रान्तीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी कार्यालय में इस आशय की एक घोषणा कि वह ऐसी नागरिकता प्राप्त करना चाहता है, तैयार करके तथा उसे वहां जमा करके ब्रिटिश इण्डिया की नागरिकता प्राप्त कर सकता है। पर शर्त यह है कि वह इस घोषणा की तिथि से एक वर्ष पूर्व तक ब्रिटिश इण्डिया में रह चुका हो। साधारणत: पत्नी की नागरिकता उसके विवाहित जीवनकाल में वही होगी जो उसके पति की होगी। कोई भी व्यक्ति जो इस समय समझ लीजिये, हैदराबाद में रहता है

और दिल्ली की नागरिकता प्राप्त करना चाहता है तो इस विधान के प्रयोग में आने के पहले या तो दिल्ली में अपना स्थायी निवास बनाकर ऐसा कर सकता है या इण्डियन सक्सेशन एक्ट की उपरोक्त व्यवस्था में बताई विधि के अनुसार चलकर ताकि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन वह 'संघ की अधिकार सीमा के अन्तर्गत प्रदेश' का अधिवासी हो जाये।

खण्ड 2 और 3 में वही व्यवस्थायें हैं जिनका तत्सम्बन्धी समिति ने सुझाव दिया है। अगर खण्ड 3 के अनुसार हम मसले को संघ-कानून पर छोड़ने के लिये रजामन्द हों तो फिर खण्ड 2 जरूरी नहीं है। इस सम्बन्ध में Calcutta Weekly Notes में प्रकाशित निम्नलिखित विचार के समर्थन में बहुत कुछ कहा जा सकता है:

''यह सम्भव नहीं है कि विधान द्वारा इस बात की विस्तृत व्याख्या की जाये कि राष्ट्रीयता की क्या शर्तें होंगी चाहे वह जन्म या देशीयकरण के आधार पर मानी जायें। अगर विधान में इसके लिये कुछ शर्तें निश्चित कर दी जाती हैं तो इससे भविष्य में बनाये जाने वाले कानूनों के भाष्य को लेकर, जो इन शर्तों के प्रतिकूल अथवा उनसे किसी तरह भिन्न दिखाई दे सकते हैं कठिनाई उपस्थित हो सकती है। उदाहरण के लिये राष्ट्रीयता सम्बन्धी खण्ड के उस मस्विदे को ही लीजिये जो विधान-परिषद् के सामने पेश है। उसमें कहा गया है कि राज्य संघ में जन्मा कोई भी व्यक्ति राज्य-संघ का नागरिक होगा। परन्तु राज्य-संघ के उन स्त्री और पुरुष नागरिकों के सम्बन्ध में क्या होगा जो विदेशी पुरुष और स्त्री से विवाह कर लें? क्या राज्य संघ की व्यवस्थापिका को यह अधिकार होगा कि वह ऐसा कानून बनावे कि स्त्री तो राज्य-संघ की नागरिकता से वंचित हो जायेगी और विदेशी पत्नी यहां की नागरिकता प्राप्त कर लेगी (जैसा कि बहुत से देशों में होता है)? ये बड़े जटिल प्रश्न हैं और पहले इसके कि विधान में इस सम्बन्ध में हम कोई कठोर खण्ड रखें इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर लेना जरूरी है। इसलिये हमारी राय में यह बेहतर होगा कि यह बात साफ तौर पर बता दी जाये कि विधान के प्रयोग में आने के समय भारतीय राज्य-संघ के कौन लोग नागरिक होंगे, जैसा कि आयरिश फ्री स्टेट के विधान में है और यह बात राज्य-संघ पर छोड़ दी जाये कि जातीयता सम्बन्धी कानून की व्यवस्था वह प्राइवेट अन्तर्राष्ट्रीय कानून के सर्वसम्मत सिद्धान्तों के अनुसार स्वयं कर ले।'' (Calcutta Weekly Notes Vol. LI, No. 27, May 26, 1947)

इसी पत्र ने अपने बाद के दो अंकों में (संख्या 28 और 29, ता. 2 जून तथा 9 जून, 1947) खण्ड 2 के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले कई प्रश्नों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। सब बातों को देखते हुये यही अच्छा होगा कि इस खण्ड को बिल्कुल ही हटा दिया जाये और खण्ड 3 के अनुसार इन सभी बातों की व्यवस्था संघ-कानून पर छोड़ दी जाये।

भाग 3

मौलिक अधिकार तथा राज्य की नीति के सम्बन्ध में निर्देशात्मक सिद्धान्त

1. मौलिक अधिकार: [इस स्थल पर विधान-परिषद् द्वारा स्वीकृत मौलिक सिद्धांतों को और राज्य की नीति के सम्बन्ध में निर्देशात्मक सिद्धांतों को लिपिबद्ध कर दीजिये।]

भाग 4

अध्याय 1

संघ का शासन प्रबन्ध

1. राज्य संघ का प्रधान: (1) राज्य-संघ का प्रधान होगा राष्ट्रपति, जिसका निर्वाचन निम्नलिखित व्यवस्था के अनुसार होगा।

(2) निर्वाचन निर्वाचक-मण्डल द्वारा होगा जिसमें ये होंगे:

(क) राज्य-संघ की पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के सदस्य, तथा

(ख) सभी प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्य अथवा जहां की व्यवस्थापिका द्विसभात्मक है, नीचे वाली सभा के सदस्य।

इकाइयों के प्रतिनिधित्व सम्बन्धी अनुपात में एकरूपता रखने के लिये, प्रादेशिक व्यवस्थापिका (Unit Legislative) के वोटों को सम्बन्धित इकाई की जनसंख्या के अनुपात से वजन दिया जायेगा।

व्याख्या: एक इकाई का अर्थ है एक प्रांत या भारतीय रियासत से, जो निजी अधिकार के नाते संघ-पार्लियामेंट के लिये अपने सदस्य चुनती है। उन भारतीय रियासतों में, कौंसिल आफ स्टेट के प्रतिनिधि चुनने के लिये जिनका

समूहीकरण कर दिया गया है, इकाई का अर्थ है ऐसे बने रियासती समूह से और इकाई की व्यवस्थापिका का मतलब है उस समूह की सभी रियासतों की व्यवस्थापिकाओं से।

(3) राष्ट्रपति का चुनाव गुप्त मत-पत्र द्वारा तथा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से होगा।

(4) उक्त आदेशों के अधीन संघ-पार्लियामेंट के कानून द्वारा राष्ट्रपति पद के लिये चुनाव की व्यवस्था की जायेगी।

[नोटः–प्रदेशों (units) की आबादी के आधार पर वोटों को वजन देने की व्यवस्था का रखना यहां आवश्यक है, ताकि बड़े बड़े प्रदेशों के वोट छोटे छोटे प्रदेशों के वोटों से दब न जायें, जिनकी व्यवस्थापिका में हो सकता है कि सदस्य संख्या अपेक्षाकृत अधिक हो। वोटों को वजन देने की क्या पद्धति होगी यह बात यहां उदाहरण के तौर पर बता दी जा सकती है। एक व्यवस्थापिका में जहां का प्रत्येक सदस्य 1 लाख (100,000) की आबादी का प्रतिनिधित्व करता है, उसका वोट 100 के बराबर होगा, यानी एक वोट प्रत्येक 10,000 आबादी के लिये होगा और जहां की व्यवस्थापिका ऐसी है कि उसका हर सदस्य 10,000 की आबादी का प्रतिनिधित्व करता है, उसका वोट इसी पैमाने पर 10 के बराबर होगा।]

2. राष्ट्रपति का कार्यकालः (1) राष्ट्रपति पांच साल तक अपने पद पर आसीन रहेगा, पर शर्त है किः

(क) राष्ट्रपति हस्ताक्षर सहित अपना त्याग पत्र कौंसिल आफ स्टेट के सभापति या हाउस आफ पीपुल्स के अध्यक्ष को देकर पद-त्याग न कर दे।

(ख) राष्ट्रपति विधान का उल्लंघन करने के कारण सार्वजनिक दोषारोपण द्वारा उपखण्ड (2) में बताई हुई विधि के अनुसार अपने पद से हटा दिया जा सकता है।

(2) (क) विधान का उल्लंघन करने के कारण जब राष्ट्रपति पर सार्वजनिक दोषारोपण किया जायेगा तो उनके विरुद्ध यह अभियोग संघ-पार्लियामेंट की कोई सभा उपस्थित करेगी, परन्तु अभियोग उपस्थित करने का कोई प्रस्ताव वह सभा स्वीकार नहीं करेगी, जब तक उसकी कुल सदस्य संख्या के दो तिहाई सदस्यों का समर्थन प्रस्ताव को न प्राप्त हो।

(ख) जब संघ की पार्लियामेंट की किसी सभा द्वारा अभियोग उपस्थित कर दिया जायेगा तो दूसरी सभा उस अभियोग की जांच करेगी या करायेगी और ऐसी जांच के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को स्वयं उपस्थित होने का तथा अपना प्रतिनिधित्व कराने का अधिकार होगा।

(ग) अगर जांच के फलस्वरूप, जिस सभा ने जांच की है या करायी है, उसके कुल सदस्यों की दो तिहाई द्वारा समर्थित ऐसा प्रस्ताव पास हो जाता है जिसमें यह घोषित किया गया हो कि राष्ट्रपति के विरुद्ध लगाया गया अभियोग सिद्ध हो गया है तो उस प्रस्ताव द्वारा प्रस्ताव की तिथि के दिन से राष्ट्रपति अपने पद से हटा दिया जायेगा।

(3) एक व्यक्ति जो राष्ट्रपति के पद पर आसीन है या रह चुका है, पुनर्निर्वाचन के लिये एक बार किन्तु केवल एक बार चुना जायेगा।

[नोटः उपखंड (1) (ख) तथा उपखण्ड (2) आयरिश विधान के आर्टिकिल 12 (10) के आधार पर रखे गये हैं और उपखंड (3) भी आयरिश विधान से ही लिया गया है।]

3. उम्र की शर्त : संघ का हर नागरिक जो 35 साल का हो चुका है और हाउस आफ पीपुल्स का सदस्य चुने जाने की योग्यता रखता है, राष्ट्रपति पद के लिये निर्वाचन के योग्य है।

[नोटः यह व्यवस्था अमेरिकन विधान के आर्टिकिल 2, धारा 1(5) तथा आयरिश विधान के आर्टिकिल 12(4) के आधार पर रखी गयी है।]

4. (1)राष्ट्रपति संघ-पार्लियामेंट की दो सभाओं में किसी का भी सदस्य न होगा और अगर किसी सभा का सदस्य राष्ट्रपति चुना गया तो यह समझा जायेगा कि उसने सभा में अपना स्थान रिक्त कर दिया है।

(2) राष्ट्रपति किसी अन्य लाभप्रद पद पर नहीं रहेगा।

(3) राष्ट्रपति का एक सरकारी निवासग्रह होगा और वह संघ-पार्लियामेंट के एक्ट द्वारा निर्धारित वेतन और भत्ते पायेगा तथा जब तक इसकी व्यवस्था न हो, उस वेतन और भत्ते को पायेगा जो परिशिष्ट में निर्धारित किये गये हैं।

(4) राष्ट्रपति का वेतन तथा उसके भत्ते उनके पद की अवधि में कम नहीं किये जायेंगे।

[नोटः—यह व्यवस्था आयरिश विधान के आर्टिकिल 12 (6) तथा 2 के आधार पर रखी गयी है।]

5. आकस्मिक रूप से स्थान का रिक्त होना तथा निर्वाचन पद्धतिः आकस्मिक रूप से रिक्त हुये स्थान की पूर्ति के लिये समुचित व्यवस्था होनी चाहिये। सभी निर्वाचनों के लिये, चाहे रिक्त स्थान सम्बन्धी हो या अन्यथा, विस्तृत विधि की व्यवस्था संघ-पार्लियामेंट के एक्ट पर छोड़ दी जाती है; पर शर्त यह है कि:

(क) स्थान रिक्त होने के बाद यथासम्भव शीघ्र और किसी भी हालत में स्थान खाली होने की तिथि से 6 माह के बाद नहीं, रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये चुनाव किया जायेगा।

(ख) रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये किये गये चुनाव में जो व्यक्ति राष्ट्रपति निर्वाचित होगा, उसे पांच वर्ष की पूरी अवधि तक पदासीन रहने का हक़ होगा।

6. **उपराष्ट्रपतिः** (1) राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में या उस हालत में जब कि राष्ट्रपति की मृत्यु हो जाये या वह पदत्याग कर दे या पदच्युत कर दिये जायें अथवा जब वे अपने अधिकारों के प्रयोग और कर्तव्यों के पालन में अक्षम या असफल हो जायें या जब कि उनका स्थान रिक्त हो जाये, तो उनके कर्तव्यों का पालन तब तक उप-राष्ट्रपति करेगा जब तक कि राष्ट्रपति अपने कार्यों का भार न ग्रहण कर लें या नया राष्ट्रपति न निर्वाचित हो जाये, जैसी भी दशा हो।

(2) उपराष्ट्रपति संघ-पार्लियामेंट की दोनों सभाओं द्वारा उनकी सम्मिलित बैठक में गुप्त मतपत्र द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से चुना जायेगा और अपने ओहदे की हैसियत से वह कौंसिल आफ स्टेट का अध्यक्ष होगा।

(3) उप-राष्ट्रपति पांच वर्ष की अवधि के लिये पदासीन रहेगा।

7. **राष्ट्रपति के कर्त्तव्यः** (1) इस विधान के आदेशों के अधीन संघ का शासन सम्बन्धी अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त होगा।

(2) उपरोक्त आदेश की सामान्य रूपता को बिना हानि पहुंचाये–

(क) संघ की रक्षा-सैन्य (defence force) का प्रधान अधिनायकत्व राष्ट्रपति को प्राप्त होगा।

(ख) क्षमा प्रदान करने का तथा ऐसी किसी अदालत द्वारा, जिसे फौजदारी के मामलों को सुनने का अख्तियार है, दिये गये दण्ड को बदलने या माफ करने का अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त होगा। पर सजा बदलने या उसे माफ करने का अधिकार कानून द्वारा और अधिकारियों को भी दिया जा सकता है।

[नोटः उपरोक्त उपखण्ड 2 (ख) में जिन शब्दों के नीचे लकीर दे दी गयी है, वे आवश्यक हैं क्योंकि Criminal Procedure Code में ऐसी व्यवस्थाएं हैं जो इस सम्बन्ध में, सम्भवतः नवीन विधान के प्रयोग में आने के बाद भी अमल में रहेंगे। आयरिश विधान में भी इसी तरह के प्रतिबंध मूलक शब्द आये हैं।]

8. संघ के शासन प्रबंध सम्बंधी अधिकार का विस्तारः इस विधान के आदेशों के अधीन, संघ के शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का विस्तार उन मामलों तक होगा जिनके सम्बन्ध में संघ-पार्लियामेंट को कानून बनाने का अधिकार प्राप्त होगा तथा उन अन्य मामलों तक होगा जिनके सम्बन्ध में संधि या समझौते के द्वारा शासन-प्रबन्ध का अधिकार संघ को सौंप दिया गया है और इन अधिकारों का प्रयोग संघ के किसी एजेन्सी (माध्यम) अथवा प्रदेशों द्वारा किया जायेगा।

9. संघ में सम्मिलित रियासत के शासक का संघ-गत विषयों के सम्बन्ध में अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार को रियासत में प्रयोग में लाने का हक तब तक बना रहेगा जब तक कि उपयुक्त संघ-शासनाधिकारी (Federal Executive) द्वारा इस सम्बन्ध में अन्यथा व्यवस्था न कर दी जाये।

[नोटः सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 8 (2) में इसी तरह की व्यवस्था है। इस धारा की तरह यह खण्ड संघ में सम्मिलित भारतीय रियासतों के शासकों को संघ गत विषयों के सम्बन्ध में भी शासन-प्रबंध सम्बन्धी समवर्ती अधिकार तब तक के लिए प्रदान करता है जब तक कि संघ-शासनाधिकारी द्वारा इस सम्बन्ध में अन्यथा व्यवस्था न

कर दी जाये। (इस सम्बन्ध में प्रान्तों की स्थिति भिन्न है, क्योंकि संघ गत विषयों के सम्बन्ध संघ-कानून द्वारा इनको जो शासनाधिकार दिये गये हैं, उसके अलावा उन्हें और शासनाधिकार नहीं प्राप्त हैं।) इस तरह का खण्ड आवश्यक है क्योंकि अन्यथा संघ में सम्मिलित हुई रियासतों के संघ-गत विषयों के सम्बन्ध में सभी स्थायी विधानाश्रित अधिकार (Statutory powers) इस विधान के प्रयोग में आते ही समाप्त हो जायेंगे।]

10. **मंत्रिमण्डलः** राष्ट्रपति को उनके कर्तव्यों का पालन करने में सहायता और परामर्श देने के लिये एक मन्त्रिमण्डल होगा जिसका नेता प्रधान मन्त्री होगा।

11. **संघ का एडवोकेट जनरलः** संघ-सरकार को उन कानूनी प्रश्नों पर सलाह देने के लिये जो उसके सामने पेश किये जायेंगे, राष्ट्रपति एक ऐसे व्यक्ति को जो सुप्रीम कोर्ट का जज नियुक्त किये जाने के योग्य हो, संघ का एडवोकेट जनरल नियुक्त करेगा।

12. **संघ-सरकार का कार्य संचालनः** संघ-सरकार की सभी शासन प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यवाहियों के सम्बन्ध में ऐसा व्यक्त किया जायेगा कि वे राष्ट्रपति की तरफ से की गयी हैं।

अध्याय 2

संघ-पार्लियामेंट

13. **संघ-पार्लियामेंट की रचनाः** संघ का कानून निर्माण सम्बन्धी अधिकार संघ की पार्लियामेंट को प्राप्त होगा जिसमें राष्ट्रपति तथा द्विसभात्मक राष्ट्रीय परिषद् (National Assembly) शामिल हैं। इस परिषद् की दो सभायें 'कौंसिल आफ स्टेट्स' और 'हाउस आफ पीपुल्स' होंगी।

14–1. (क) कौन्सिल आफ स्टेट्स में ये होंगे:

(1) मनोनीत सदस्य जिनको राष्ट्रपति विश्वविद्यालयों तथा विज्ञान सम्बन्धी संस्थाओं के परामर्श से मनोनीत करेंगे पर इनकी संख्या 10 से ज्यादा न होगी।

(2) अंगों (units) के प्रतिनिधि जो प्रदेश की प्रत्येक 10 लाख आबादी पर 50 लाख तक 1 प्रतिनिधि के हिसाब से और इसके ऊपर प्रत्येक 20 लाख आबादी पर 1 प्रतिनिधि के हिसाब से लिये जायेंगे, पर अंग-प्रतिनिधियों की कुल संख्या अधिक से अधिक 20 होगी।

व्याख्याः इकाई (units) का अर्थ है एक प्रांत या भारतीय रियासत, जो अपने निजी अधिकार के नाते संघ की पार्लियामेंट के लिये अपना सदस्य निर्वाचित करता है। भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में जिनका, कौंसिल आफ् स्टेट्स में प्रतिनिधि भेजने के लिए गुट बना दिया गया है, प्रदेश का अर्थ है इस तरह बने गुट से।

(ख) कौंसिल आफ् स्टेट्स में आने वाले प्रत्येक प्रदेश के प्रतिनिधियों का चुनाव उस प्रदेश की व्यवस्थापिका की नीचे वाली सभा करेगी।

(ग) हाउस आफ् पीपुल्स में संघ की अधिकारगत भूमि के बाशिन्दों के प्रतिनिधि होंगे, जिनका अनुपात प्रत्येक 10 लाख की आबादी पर एक से कम न होगा और प्रत्येक 750 हजार पर 1 से ज्यादा न होगा।

(घ) प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र से किसी भी समय चुने जाने वाले सदस्यों की संख्या तथा उस निर्वाचन-क्षेत्र की आबादी का, जो सद्यः पूर्व की मतगणना में निश्चित हुई होगी, अनुपात यथा शक्य संघ के सारे प्रदेशों में एक समान होगा।

2. उपरोक्त प्रतिनिधियों का चुनाव उन व्यवस्थाओं के अनुसार होगा जो इसके सम्बन्ध में परिशिष्ट में दी हुई हैं:

पर शर्त यह है कि हाउस आफ पीपुल्स का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा।

3. प्रत्येक दस वार्षिक मतगणना के सम्पन्न हो जाने पर, ऐसे अधिकारी द्वारा, ऐसे तरीकों से तथा उस समय से जैसा कि संघ-पार्लियामेंट कानून द्वारा निश्चित करें, दोनों सभाओं में विभिन्न प्रांतों, भारतीय रियासतों और रियासती गुटों का प्रतिनिधित्व पुनः निश्चित किया जायेगा।

4. कौंसिल आफ स्टेट्स एक स्थायी सभा होगी जो भंग न की जा सकेगी परन्तु जहां तक हो सके लगभग उसके एक तिहाई सदस्य हर दूसरे वर्ष,

उन व्यवस्थाओं के अनुसार जो इसके लिये परिशिष्ट में दी गयी हैं, उससे अलग हो जायेंगे।

5. हाउस आफ पीपुल्स उस तारीख से जो इसकी प्रथम बैठक के लिए नियत की जायेगी, चार साल तक, इससे ज्यादा नहीं चालू रहेगी; अगर इससे पूर्व ही भंग न कर दी जाये तो उक्त चार साल की अवधि के समाप्त होने पर यह सभा भंग हो जायेगी।

6. पर शर्त यह है कि आकस्मिक आवश्यकता के समय उक्त अवधि राष्ट्रपति द्वारा बढ़ाई जा सकती है, पर एक साथ एक साल से अधिक के लिए नहीं तथा किसी भी हालत में आकस्मिक आवश्यकता की अवधि बीत जाने के बाद 6 माह से अधिक के लिए नहीं।

[नोटः केवल उन प्रांतों को ही गिनने से ''जो सम्मिलित होने के इच्छुक हैं'' कौंसिल आफ स्टेट्स के सदस्यों की अधिक से अधिक संख्या 200 के लगभग होती है तथा हाउस आफ पीपुल्स की अधिक से अधिक सदस्य संख्या 300 से 400 के बीच होती है। इस योजना के अंतर्गत ऊपर वाली सभा की रचना कैसे होगी, इसकी एक सरसरी तस्वीर निम्नलिखित तालिका से मिल जाती है।]

(नीचे वाली सभा का निर्माण केवल आबादी के आधार पर होगा)

कौंसिल आफ स्टेट्स

	प्रांत
मद्रास	20
बम्बई	12
बंगाल (पश्चिमी)	12
यू.पी.	20
पंजाब (पूर्वी)	9
बिहार	20
मध्य प्रांत	10
आसाम	7
उड़ीसा	6
कुल	116

	रियासतें
हैदराबाद	10
मैसूर	6
ट्रावनकोर	5
बड़ौदा	3
ग्वालियर	4
जयपुर	3
काश्मीर	4
जोधपुर	2
उदयपुर	2
पटियाला	2
रीवां	2
कोचीन	1
बीकानेर	1
कोल्हापुर	1
इन्दौर	1
कुल	47
बाकी रियासतों के समूहों के लिये जिनकी अपनी जनसंख्या 10 लाख से ऊपर नहीं है	24
कुल	71]

15. पार्लियामेंट का अधिवेशन बुलाने, स्थगित करने और उसे समाप्त करने के लिये, दोनों सभाओं के परस्पर सम्बन्ध की व्यवस्था करने के लिये तथा मतदान प्रणाली, सदस्यों के विशेषाधिकार, सदस्यता सम्बन्धी अयोग्यता और पार्लियामेंट की कार्यपद्धति, जिसमें आर्थिक मामलों की पद्धति भी शामिल है, इत्यादि के लिये सर्व सामान्य व्यवस्थायें होनी चाहियें। खास तौर पर अर्थ सम्बन्धी बिल प्रारम्भिक

रूप से नीचे वाली सभा में ही पेश होंगे। ऊपर वाली सभा को अर्थ सम्बंधी बिलों पर संशोधन रखने का अधिकार होगा। नीचे वाली सभा संशोधनों पर विचार करेगी और उसके बाद, चाहे वह संशोधनों को स्वीकार करे अथवा नहीं, बिल संशोधित रूप में (यदि संशोधन स्वीकार किये गये) अथवा अपने मौलिक स्वरूप में (अगर संशोधन स्वीकार नहीं किये गये) स्वीकृति के लिये राष्ट्रपति के सामने रखे जायेंगे और उनकी स्वीकृति प्राप्त होने पर वे कानून बन जायेंगे। अगर किसी बिल के सम्बन्ध में इस बात पर मतभेद हुआ कि वह अर्थ सम्बन्धी बिल है या नहीं, तो उस हालत में हाउस आफ पीपुल्स के अध्यक्ष का निर्णय अंतिम होगा। अर्थ सम्बंधी बिलों के अलावा अन्य मामलों में दोनों सभाओं को कानून बनाने का समान अधिकार प्राप्त होगा और गतिरोध होने पर दोनों सभाओं की सम्मिलित बैठक द्वारा उसके सम्बंध में फैसला किया जायेगा। राष्ट्रपति को यह अधिकार होना चाहिये कि वह नेशनल असेम्बली द्वारा स्वीकृत बिल को 6 माह के बाद पुनः विचार के लिए लौटा सके।

16. **भाषाः** संघ-पार्लियामेंट में कार्रवाई हिन्दुस्तानी (हिन्दी या उर्दू) अथवा अंग्रेजी में संचालित होगी, पर शर्त यह है कि चेयरमैन या अध्यक्ष, जैसी भी दशा हो, किसी भी वक्ता को जो इनमें से किसी भी भाषा में अपना विचार समुचित रूप से नहीं व्यक्त कर सकता, उसकी मातृभाषा में सभा के सामने बोलने की अनुमति दे सकते हैं। चेयरमैन या अध्यक्ष जैसी भी स्थिति हो, जब भी आवश्यक समझें, इस बात का प्रबन्ध कर देंगे कि सदस्य द्वारा व्यवहृत भाषा के अतिरिक्त अन्य किसी भाषा में सदस्य के भाषण का सार सभा को प्राप्त हो जाये और यह सार सभा की कार्यवाही में शामिल कर लिया जायेगा।

[नोटः—विधान-परिषद् के नियमों में इसी तरह की एक व्यवस्था है और उसी के आधार पर यह यहां रखा गया है।]

अध्याय 3

राष्ट्रपति के कानून बनाने के अधिकार

17. पार्लियामेंट के अवकाशकाल में राष्ट्रपति को आर्डिनेंस निकालने का अधिकारः (1) यदि किसी भी समय जब कि पार्लियामेंट का अधिवेशन न हो रहा हो; राष्ट्रपति को इस बात का निश्चय हो जाये कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है कि जिसमें शीघ्र कार्रवाई करना उनके लिये आवश्यक हो गया है, तो वे ऐसा आर्डिनेंस निकाल सकते हैं जिन्हें उस परिस्थिति में वे आवश्यक समझते हों।

(2) इस धारा के अन्तर्गत घोषित किये गये आर्डिनेंस को वही बल और प्रभाव प्राप्त होगा जो राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त संघ-पार्लियामेंट के किसी एक्ट को प्राप्त है; परन्तु ऐसा प्रत्येक आर्डिनेंस:

(क) संघ-पार्लियामेंट के सामने रखा जायेगा और संघ-पार्लियामेंट के पुन: सम्मिलित होने के 6 सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या, अगर इस समय के पहले दोनों सभाओं द्वारा उसके विरुद्ध प्रस्ताव पास हो जायें तो ऐस प्रस्तावों में दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में न रहेगा: और

(ख) राष्ट्रपति उसे किसी भी समय वापस ले सकते हैं।

(3) यदि इस धारा के अधीन कोई आर्डिनेंस ऐसा आदेश रखे जिसे संघ-पार्लियामेंट इस विधान के अन्तर्गत कानून बनाने में समर्थ न हो, तो वह रद्द समझा जायेगा।

[नोट:-वर्तमान विधान के अधीन आर्डिनेंस बनाने के अधिकार की बड़ी कड़ी आलोचना हुई है परन्तु यह बताना आवश्यक है कि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है कि किसी कानून को तुरन्त लागू करना अत्यावश्यक हो जाये, संघ-पार्लियामेंट की बैठक बुलाने का समय न रहे। सन् 1925 ई. में लार्ड रीडिंग ने यह आवश्यक समझा कि रुई पर महसूल खत्म करने के लिए एक आर्डिनेंस जारी किया जाये और देश-हित के लिये इसकी तुरन्त ही और अवश्य ही आवश्यकता थी। यह सम्भव नहीं है कि राष्ट्रपति, जो जनता द्वारा निर्वाचित होगा और जिसे पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी मंत्रियों की सलाह से काम करना होगा, उसको दिये हुए आर्डिनेंस जारी करने के अधिकार का दुरुपायेग करेगा। इसलिये यह आदेश प्रस्तावित किया गया है।]

अध्याय 4

संघ का न्याय सम्बन्धी शासन प्रबन्ध (Judicature)

18. **सर्वोच्च न्यायालय:** एक सर्वोच्च न्यायालय होगा जिसकी रचना तथा जिसके अधिकार और अधिकार-क्षेत्र उस प्रकार के होंगे जैसा कि संघ की न्याय-शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी कमेटी सिफारिश करेगी, सिवाय इसके कि सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश राष्ट्रपति द्वारा चीफ जस्टिस तथा सर्वोच्च न्यायालय के और हाईकोर्ट के उन न्यायाधीशों से सलाह लेने के बाद जो इस काम के लिये आवश्यक हों, नियुक्त किया जायेगा।

[नोटः–सर्वोच्च न्यायालय सम्बन्धी कमेटी+ ने कहा है कि इसके न्यायाधीशों की नियुक्ति को संघ के राष्ट्रपति की मर्जी पर छोड़ देना उपयुक्त न होगा। इस कमेटी ने इसके लिये दो विकल्प बताये हैं और दोनों में ही सम्मति देने के लिये 11 सदस्यों का एक विशेष मंडल बनाना होगा। एक विकल्प के अनुसार राष्ट्रपति प्रधान न्यायाधीश से परामर्श करके प्यूनीजज की नियुक्ति के लिये एक व्यक्ति को मनोनीत करेंगे और इस मनोनीत करण को मण्डल के कम से कम सात सदस्यों का समर्थन प्राप्त होना चाहिये। दूसरे विकल्प के अनुसार मण्डल तीन नामों की सिफारिश करेगा और उनमें से एक को राष्ट्रपति प्रधान न्यायाधीश से परामर्श करके नियुक्ति के लिये चुन लेंगे। उक्त खण्ड में सुझाई गयी व्यवस्था संघ-विधान समिति के निर्णय के आधार पर रखी गयी है।]

अध्याय 5

संघ का आडिटर-जनरल (प्रधान आय-व्यय परीक्षक)

19. **आडिटर-जनरलः** संघ का एक आडिटर-जनरल होगा जिसको राष्ट्रपति नियुक्त करेंगे और वह उसी तरह और उन्हीं कारणों से पदच्युत किया जायेगा जैसे कि सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश पदच्युत किया जयेगा।

20. **आडिटर-जनरल के कामः** आडिटर-जनरल के कर्तव्य और अधिकार उसी प्रकार के होंगे जैसा कि सन् 1935 के एक्ट की तत्सम्बन्धी आदेशों में हैं।

अध्याय 6

नौकरियां

21. **पब्लिक सर्विस कमीशनः** संघ के लिये एक पब्लिक सर्विस कमीशन होगा जिसकी रचना और जिसके कर्तव्य उसी प्रकार के होंगे जैसा कि सन् 1935 के एक्ट के तत्सम्बन्धी आदेशों में दिखाये गये हैं सिवाय इसके कि कमीशन के चेयरमैन तथा सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने मंत्रियों की सलाह से करेंगे।

22. अखिल भारतीय सेवाओं के निर्माण के लिये, जिनकी भरती तथा सेवा सम्बन्धी शर्तों का नियमन संघीय कानून द्वारा किया जायेगा, एक व्यवस्था बनाई जानी चाहिए।

+कमेटी की रिपोर्ट-परिशिष्ट में देखिये।

अध्याय 7

निर्वाचन

23. **संघ पार्लियामेंट का चुनाव:** इस विधान के आदेशों के अधीन संघ पार्लियामेंट समय समय पर उन सभी मामलों के सम्बन्ध में, जिनका द्विसभात्मक संघ-व्यवस्थापिका की किसी भी सभा के चुनाव तथा निर्वाचन-क्षेत्र की सीमा स्थिर करने से सम्बन्ध हो, व्यवस्था बना सकती है।

24. **निर्वाचन का निरीक्षण, संचालन तथा नियंत्रण:** इस विधान के अन्तर्गत होने वाले सभी निर्वाचनों के, चाहे वे संघ सम्बन्धी हों या प्रान्तीय, निरीक्षण, संचालन और नियंत्रण का अधिकार तथा इन चुनावों के सम्बन्ध में उठने वाले झगड़ों और सन्देहों पर निर्णय देने के लिये निर्वाचन-पंचायतों की नियुक्ति का अधिकार राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त कमीशन को प्राप्त होगा।

भाग 5

संघ और इकाइयों के बीच कानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकार का बटवारा

इस मद के अन्दर रखी जाने वाली व्यवस्थायें उस निर्णय पर निर्भर करती हैं जो संघ-अधिकार समिति की रिपोर्ट पर किया जायेगा। फिर भी संघ-अधिकार-समिति ने निर्णय किया है कि:

(1) विधान, एक सुदृढ़ता के साथ संघमूलक होना चाहिये।

(2) व्यवस्था सम्बन्धी तीन विस्तृत सूचियां होनी चाहियें, अर्थात् संघीय विषयों की, प्रान्तीय विषयों की तथा सहगामी विषयों की और अवशिष्ट अधिकार केन्द्र को प्राप्त रहेंगे।

(3) संघीय विषयों की व्यवस्था सम्बन्धी सूची के सम्बन्ध में रियासतों की स्थिति प्रान्तों के ही समान होगी, परन्तु सूचियों के पूर्णत: प्रस्तुत कर लिये जाने के बाद यदि कोई खास बात उठाई गयी तो उस पर विचार किया जायेगा।

भाग 6

संघ और इकाइयों के बीच शासन सम्बन्धी संसर्ग

1. केवल किसी संघीय विषय के सम्बन्ध में कानून बनाते समय, संघ पार्लियामेंट उस विषय के सम्बन्ध में अपने किन्हीं कर्तव्यों को पूरा करने का भार

किसी इकाई की सरकार को, चाहे वह रियासती हो या प्रान्तीय अथवा अन्य क्षेत्र की हो; अथवा उसके किसी अधिकारी को सौंप सकती है।

2. (1) इकाई की सरकार का यह कर्तव्य होगा कि वह अपने शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों का, जहां तक इस उद्देश्य के लिये वे आवश्यक हों और प्रयोग में लाये जा सकें, उस तरह प्रयोग करें जिससे उस इकाई के अन्दर संघ-पार्लियामेंट के हर कानून को, जो उस इकाई पर लागू होता हो, समुचित परिणाम सुनिश्चित रूप से प्राप्त हो सके। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये इकाई की सरकार को आदेश देने का, संघ-सरकार को अधिकार होगा।

(2) संघ-सरकार को, इकाई की सरकार को यह आदेश देने का अधिकार होगा कि किसी ऐसे मामले के सम्बन्ध में जिसका प्रभाव संघीय विषयों के शासन पर पड़ता हो, अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का प्रयोग वह किस तरह करे।

[नोटः गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की 122, 124 और 126 धारायें देखिये।]

भाग 7

आर्थिक व्यवस्था तथा ऋण प्राप्ति संबंधी अधिकार

1. उन साधनों से प्राप्त राजस्व, जिनके सम्बन्ध में केवल संघ-पार्लियामेंट को ही कानून बनाने का अधिकार है, संघ का राजस्व होगा परन्तु उन साधनों के सम्बन्ध में जिनका उल्लेख बाद के पैराग्राफ में किया गया है, संघ को यह अधिकार दिया जायेगा या उसके लिये यह लाजिमी कर दिया जायेगा कि उनसे प्राप्त आमदनी को वह इकाइयों में बांट दे।

2. इन करों को—यानी आयात कर, देश में पैदा होने और खपने वाले सामान पर कर, निर्यात-कर, मृत्यु-कर, कृषिजन्य आय के अतिरिक्त अन्य आयों पर कर तथा कम्पनियों पर कर—को लगाने और अगर जरूरत हो तो उनको बांटने के सम्बन्ध में व्यवस्था होनी चाहिये।

3. संघ-सरकार को यह अधिकार होगा कि संघ की आय से, किसी भी काम के लिये, चाहे वह काम ऐसा न हो जिसके सम्बन्ध में संघ पार्लियामेंट कानून बना सके, वह सहायता स्वरूप कुछ प्रदान कर सके।

4. उन शर्तों और प्रतिबन्धों के अधीन जो संघ के कानून द्वारा लगाये जायें, संघ के किसी काम के लिये संघ की आय की जमानत पर कर्ज लेने का संघ सरकार को अधिकार होगा।

5. संघ की किसी इकाई को उन शर्तों पर और उन सूरतों में जो संघ-सरकार निर्धारित करे, कर्ज देने या उसके मिलने वाले कर्ज की जमानत देने का संघ-सरकार को अधिकार होगा।

[नोट:—देखिये 1935 के गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट की धाराएं 136, 140, 162 तथा 163(2) जिनमें ऐसी ही व्यवस्था है।]

भाग 8

सीधे संघ द्वारा शासित प्रदेश

1. अन्तर्कालीन व्यवस्था के लिये चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों पर केन्द्र का शासन जारी रहना चाहिये जैसा कि गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 में है और इस पद्धति में किसी भी परिवर्तन के प्रश्न पर बाद में विचार किया जाना चाहिये तथा विधान में अण्डमान और निकोबार द्वीप समूहों के साथ-साथ केन्द्र द्वारा शासित सभी क्षेत्रों का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये।

2. कबायली क्षेत्रों के शासन के लिये विधान में उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये।

[नोट:—कबायली क्षेत्रों के सम्बन्ध में जो व्यवस्था की जाये उसमें वह योजना भी शामिल रहनी चाहिए जिसे एडवाजरी कमेटी की रिपोर्ट पर विधानपरिषद् ने इन प्रदेशों के लिए स्वीकार किया है।]

भाग 9

विविध

एडवाजरी कमेटी की रिपोर्ट पर विधान-परिषद् ने अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिये जो व्यवस्थायें स्वीकार की थीं, वह सब विधान में शामिल रहनी चाहिये।

भाग 10

विधान में संशोधन

विधान सम्बन्धी संशोधन संघ-पार्लियामेण्ट की किसी भी सभा में पेश किया जा सकता है और जब प्रस्तावित संशोधन प्रत्येक सभा में उपस्थित और मत देने वाले दो तिहाई सदस्यों के बहुमत से स्वीकृत हो जाये और संघ की आधी इकाइयों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा, उससे कम नहीं, अनुमोदित हो जाये, तो वह स्वीकृति के लिये राष्ट्रपति के सामने रखा जायेगा और उनकी स्वीकृति मिलने पर वह संशोधन प्रयोग में आयेगा।

[**व्याख्याः** इकाई (units) का इस खण्ड में वही अर्थ है जो भाग 4 के खण्ड 14 में है। जहां इकाई रियासती गुटों की है, वहां यह प्रस्तावित संशोधन उस हालत में इकाई की व्यवस्थापिका द्वारा अनुमोदित समझा जायेगा, जब कि उस गुट की रियासतों की बहुसंख्यक व्यवस्थापिकायें उसका अनुमोदन कर दें।]

भाग 11

परिवर्तन कालीन व्यवस्थाएं

1. सब सम्पत्ति, अधिकार और देने-पावने के सम्बन्ध में संघ-सरकार गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 के अनुसार स्थापित भारत-सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।

[यदि इस विधान के प्रयोग में आने के पहले ही भारत में दो उत्तराधिकारिणी सरकारें स्थापित हो जायें तो उस खण्ड में वैसा संशोधन करना पड़ेगा जैसा कि देने और पावने का बंटवारा हो।]

2. (1) इस विधान के अधीन, विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले जो कानून संघ के प्रदेशों के अन्दर प्रयोग में रहेंगे उनका वहां प्रयोग में रहना तब तक जारी रहेगा जब तक कि अधिकृत व्यवस्थापिका या अधिकारी द्वारा उनको बदल न दिया जाये, या उनका प्रत्याख्यान न कर दिया जाये, या उनमें संशोधन न कर दिया जाये।

(2) राष्ट्रपति आज्ञा द्वारा यह व्यवस्था कर सकते हैं कि कोई कानून, जिसका प्रयोग प्रान्तों में जारी हो, अगर किसी अधिकृत अधिकारी द्वारा उसका प्रत्याख्यान या उसमें संशोधन न कर दिया जाये तो किसी निर्धारित तिथि से ऐसे परिवर्तनों और adaptations के अधीन जिन्हें राष्ट्रपति उस कानून को विधान-परिषद् के आदेशों के अनुरूप बनाने के लिये आवश्यक और उचित समझें, वह प्रयोग में आयेगा।

3. जब तक कि इस विधान के अनुसार बाकायदा सर्वोच्च न्यायालय की रचना न हो जाये, संघ-अदालत (फेडरल कोर्ट) को ही सर्वोच्च न्यायालय समझा जायेगा और सर्वोच्च न्यायालय के सभी कर्तव्यों का वह पालन करेगा:

किन्तु शर्त यह है कि इस विधान के प्रयोग में आने के समय जो भी विचाराधीन मामले संघ-अदालत और प्रिवी कौंसिल की न्याय सम्बन्धी समिति के सामने होंगे, उनका यह मानकर निपटारा किया जायेगा कि मानो विधान प्रयोग में ही नहीं आया है।

4. उन पदासीन व्यक्तियों के सिवाय जिनका उल्लेख सूची में आया है, हर व्यक्ति, मय संघ-अदालत या हाईकोर्ट के किसी जज के, जो इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले भारत में सम्राट की नौकरी में था, उस तिथि को उसका संघ या सम्बन्धित इकाई की नौकरी पर तबादला कर दिया जायेगा और वह अपने पूर्व पद की अवधि तक पदासीन रहेगा।

[नोट:-बाद के दूसरे खण्ड के अन्तर्गत इस नये विधान के प्रयोग में आने के समय से एक अस्थायी राष्ट्रपति होगा जिससे कि गवर्नर-जनरल की आवश्यकता न रह जायेगी। इसी तरह प्रान्तों में सम्राट द्वारा नियुक्त गवर्नर की आवश्यकता न रह जायेगी। यही बात कुछ अन्य पदाधिकारियों के सम्बन्ध में भी सही हो सकती है। ऐसे सारे पदों को एक सूची में लिपिबद्ध कर दिया जा सकता है। प्रस्तावित आदेश उन व्यक्तियों पर भी लागू होता है जो परिशिष्ट में उल्लिखित पदों को छोड़कर अन्य पदों पर आसीन हैं। तुलना के लिए आयरिश फ्री स्टेट के सन् 1922 ई. के विधान की अन्तरिम व्यवस्था संबंधी आर्टिकिल 77 देखिये जो नीचे उद्धृत कर दिया गया है:

''इस विधान के प्रयोग में आने के दिन ऐसा हर व्यक्ति जो अस्थायी सरकार का पदाधिकारी होगा, (ऐसा पदाधिकारी नहीं जिसकी सेवायें ब्रिटिश सरकार

द्वारा अस्थायी सरकार को उधार स्वरूप दी गयी हों) उसका तबादला कर दिया जायेगा और वह आयरिश फ्री स्टेट का पदाधिकारी हो जायेगा और अपने पूर्व पद की अवधि तक पदासीन रहेगा।''']

5. (1) जब तक कि नेशनल असेम्बली की दोनों सभाओं का इस विधान के अन्तर्गत यथाविधि निर्माण न हो जाये और उनकी बैठक न बुलाई जाये, स्वयं विधान-परिषद् दोनों सभाओं के सारे अधिकारों का प्रयोग करेगी और उनके सभी कर्तव्यों को पूरा करेगी।

व्याख्याः इस उपखण्ड की अभिप्राय सिद्धि के लिये विधान-परिषद् में ऐसे सदस्य सम्मिलित नहीं किये जायेंगे जो ऐसे क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हों जो परिशिष्ट 1 में न शामिल हों।

(2) ऐसा व्यक्ति, जिसे अपनी तरफ से विधान-परिषद् ने चुन लिया होगा, तब तक संघ का अस्थायी राष्ट्रपति रहेगा जब तक कि एक राष्ट्रपति इस विधान के भाग 4 के अनुसार चुन न लिया जाये।

(3) तब तक जब तक कि इस विधान के भाग 4 के अनुसार मंत्रियों को यथाविधि नियुक्त न कर लिया जाये, ऐसे व्यक्तियों का एक अस्थायी मंत्रिमण्डल रहेगा जिन्हें इस काम के लिये अस्थायी राष्ट्रपति ने नियुक्त किया हो।

[नोटः—यह आवश्यक है कि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन एक व्यवस्थापिका तथा एक शासन प्रबन्ध सभा रहनी चाहिए जो अधिकार ग्रहण करने के लिए तुरंत प्रस्तुत रहे। इसके लिये सर्वोत्तम व्यावहारिक पथ यह है कि स्वयं विधान-परिषद् अस्थायी व्यवस्थापिका हो जाये। अस्थायी शासन-प्रबंध सभा सम्बन्धी खण्ड परिणामवर्ती है; फिर भी 1935 के गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट में संशोधन करके नवीन डोमिनियन एक्ट बनाने के बाद उन आदेशों में परिवर्तन की आवश्यकता हो सकती है।]

6. परिवर्तन काल में अप्रत्याशित कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं। इसलिये विधान में निम्नलिखित व्यवस्था के आधार पर एक खण्ड रहना चाहिये।

संघ-पार्लियामेंट कानून बनाकर, बावजूद किसी व्यवस्था के जो भाग 10 में हो यह कर सकती है:

(क) यह आदेश दे सकती है कि यह विधान सिवाय उक्त भाग के और इस खण्ड के आदेशों के उस अवधि के अन्दर, यदि ऐसी कोई अवधि हो जैसा कि कानून में निर्धारित की गयी हो, उन adaptations और संशोधनों के अधीन जो निर्धारित किये जायें, प्रयोग में रहेगा।

(ख) ऐसी किन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के लिये जिनका जिक्र ऊपर आया है, यह ऐसी अन्य व्यवस्थायें बना सकती है जो कानून में निर्धारित की गयी हों।

इस विधान के प्रयोग में आने से 3 वर्ष समाप्त होने पर इस खण्ड के अन्तर्गत कोई कानून नहीं बनाया जायेगा।

[नोट:–कठिनाइयां दूर करने के सम्बन्ध में जो खण्ड यहां आया है वह अब बिलकुल ठीक है। उदाहरण के लिये, गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की धारा 310 देखिये। 3 वर्ष की अवधि यहां आयरिश विधान के आर्टिकिल 51 से ली गयी है। इस खंड से प्रथम तीन वर्षों की अवधि में संशोधन संबंधी पद्धति में अपेक्षाकृत अधिक सरलता आ जायेगी।]

विधान परिषद्

सर्वोच्च न्यायालय सम्बन्धी विशेष कमेटी

प्रधान न्यायालय के अधिकार और निर्माण पर विचार करने के लिये नियुक्त की गयी कमेटी के निम्न हस्ताक्षर करने वाले सदस्यगण अपनी इस रिपोर्ट को सादर पेश करते हैं।

2. हमने निम्न शीर्षकों में इस विषय पर विचार किया:

1. प्रधान न्यायालय के अधिकार और क्षेत्र।
2. न्यायालय के परामर्श अधिकार।
3. न्यायालय के अधीन अधिकार।
4. न्यायालय का निर्माण तथा न्यायाधीश संख्या।
5. न्यायाधीशों की नियुक्ति-विधि तथा उनकी योग्यतायें।
6. न्यायाधीशों की मुलाजमत की शर्तें तथा उनकी अवधि।

1. प्रधान न्यायालय के अधिकार और क्षेत्र

3. एक्टों और कानूनों की वैधानिक प्रामाणिकता पर निर्णय देने का अधिकार रखने वाला प्रधान न्यायालय किसी भी संघ-योजना का आवश्यक अंश माना जा सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि यह अधिकार केवल प्रधान कार्यालय को ही हो। वर्तमान भारतीय विधान में भी किसी न्यायालय में एक्टों और कानूनों की वैधानिक प्रामाणिकता पर प्रश्न उठाया जा सकता है जब कि वह प्रश्न न्यायालय के समक्ष मुकदमें के सिलसिले में उत्पन्न न हो जाये।

4. कुछ प्रयोजनों के लिये प्रधान कार्यालय को इस प्रकार आवश्यक जानकर हम विचार करते हैं कि न्यायालय को नये भारतीय विधान के अन्तर्गत निम्न अतिरिक्ताधिकार बखूबी दिये जायें।

(क) संघ और इकाइयों अथवा इकाइयों के पारस्परिक झगड़ों के सम्बन्ध में खास अधिकार।

5. इस प्रकार के झगड़ों का निर्णय करने के लिये प्रधान न्यायालय अत्यंत लाभप्रद अदालत है और उसका न्यायाधिकार क्षेत्र अनियन्त्रित होना चाहिये।

(ख) संघ द्वारा की हुई संधियों के सम्बंध में उत्पन्न विषयों पर विचाराधिकार।

6. विदेशी मामलों के विषय के अंश स्वरूप संधि करने का अधिकार संघ को है, इसलिये यह उचित होगा कि संघ के प्रधान न्यायालय को संधियों में उत्पन्न हुये तथा संघ और विदेशी राज्य के मध्य अपराधी प्रत्यर्पण के अन्तर्गत समस्त विषयों पर अन्तिम निश्चय करने के अधिकार सौंपे जायें। यद्यपि प्रथम बार ही यह अनिवार्य नहीं। अभी हम परस्पर इकाइयों में अपराधी प्रत्यर्पण पर विचार नहीं करते हैं क्योंकि यह संघ और इकाइयों में अधिकारों के अन्तिम विभाजन पर निर्भर है।

(ग) संघ के दायरे में अन्य ऐसे विषयों के सम्बंध में अधिकार जिनको संघ व्यवस्थापक मंडल निर्धारित करें।

7. यदि संघ-व्यवस्थापक मण्डल किसी विषय पर कानून बनाने में समर्थ है तो वह उस विषय पर अपनी मर्जी के न्यायालय को न्याय सम्बन्धी अधिकार सौंपने के लिये भी स्पष्ट रूप से समर्थ है और यदि वह इस प्रयोजन के लिये

प्रधान न्यायालय को चुनता है तो प्रधान न्यायालय को इस प्रकार सौंपे गये न्याय सम्बन्धी अधिकार प्राप्त होंगे।

(घ) विधान द्वारा गारंटी किये गए मौलिक अधिकारों को लागू करने के विचाराधिकार।

8. मौलिक अधिकार के मसविदे का वाक्यखण्ड 22 बतलाता है कि मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिये उचित कार्यवाही द्वारा प्रधान न्यायालय में अभियोग पेश करने के अधिकार की गारण्टी की जाती है। तो भी हमारा यह विचार है कि केवल ऐसे विषयों के लिये प्रधान न्यायालय को ही अधिकार देना अवांछनीय है। मौलिक अधिकारों के भंग किये जाने पर यदि कोई व्यक्ति प्रधान न्यायालय से सहायता प्राप्त करने के लिये विवश हो जाता है तो उस नागरिक को मौलिक अधिकारों से वास्तव में वंचित रखा जायेगा, क्योंकि उनको पुनः केवल वहीं से प्राप्त किया जा सकता है। जहां आवश्यक अधिकार प्राप्त दूसरा न्यायालय नहीं है, वहां प्रधान न्यायालय को यह कार्य करना चाहिये। जहां आवश्यक अधिकार प्राप्त अन्य न्यायालय हैं, वहां प्रधान न्यायालय को अपील सुनने और पुनर्विचार करने के अधिकार होने चाहियें।

(ङ) अपील सुनने के उसी प्रकार के सामान्य अधिकार जो कि प्रीवी कौंसिल द्वारा वर्तमान समय में प्रयोग में लाये जाते हैं।

9. नये विधान के अन्तर्गत प्रीवी कौंसिल के अन्तिम अपील सुनने के अधिकार भंग होंगे और यह स्पष्ट वांछनीय है कि उसी प्रकार के अधिकार अब प्रधान न्यायालय को सौंप दिये जायें।

जहां तक ब्रिटिश भारतीय इकाइयों का सम्बन्ध है, यह अधिकार प्रीवी कौंसिल के वर्तमान अधिकारों के साथ समान रूप में व्यापक रहेगा। रियासती इकाइयों के सम्बन्ध में कम से कम दो प्रकार के मामले हैं जिनको साम्य रूप देने के हितार्थ यह स्पष्ट रूप से वांछनीय है कि अन्तिम निर्णय प्रधान न्यायालय पर निर्भर रहे, उदाहरणस्वरूपः

(1) वह मामले जिनमें संघ के नियम की व्याख्या शामिल हो, तथा

(2) वह मामले जिनमें इकाई के सम्बन्धित रियासत के अतिरिक्त नियम की व्याख्या शामिल हो।

सर बी.एल. मित्तर सुझाव पेश करते हैं कि इस प्रकार की समानता या तो प्रधान न्यायालय के अपील सुनने के अधिकारियों से निवेदन करने से या किसी विशेष वाद-हेतु का प्रधान न्यायालय को हवाला देने से प्राप्त हो सकती है। संघ के या किसी इकाई के नियम की वैधानिक प्रामाणिकता सम्बन्धी मामलों पर विचार हो ही चुका है, वे अनिवार्य रूप से प्रधान न्यायालय के अधिकार के अन्तर्गत आयेंगे।

10. प्रत्येक रियासती इकाई को विशेष प्रतिज्ञा-पत्र द्वारा उल्लिखित विषयों के अतिरिक्त विचाराधिकार प्रधान न्यायालय को सौंप देने का अधिकार होगा।

2. न्यायालय के परामर्श अधिकार

11. रियासत के प्रधान को कानून के कठिन प्रश्नों पर सलाह देने के दायित्व को प्रधान न्यायालय के सुपुर्द करने के औचित्य पर कानून के विशेषज्ञों और राजनैतिक विचारों में परस्पर यथेष्ट मतभेद रहा। विपक्ष में युक्तियां होते हुये भी वर्तमान विधान के अन्तर्गत 1935 ई. के एक्ट की धारा 213 के अनुसार यह उचित समझा गया कि परामर्श अधिकार फेडरल कोर्ट को सौंप दिये जायें। दोनों पक्षों की दलीलों पर पूर्णतया विचार करने पर हम यह अनुभव करते हैं कि नये विधान के अन्तर्गत भी इस अधिकार को कायम रखना सर्वोपरि उत्तम होगा। यह माना जा सकता है कि इस प्रकार के अधिकार को अनावश्यक रूप से प्रयोग में लाने की सम्भावना नहीं है, जैसा कि हम प्रस्तुत रखते हैं, न्यायालय में 10 या 11 न्यायाधीश होंगे। समूचे न्यायालय की घोषणा अधिकारपूर्ण सलाह के समान समझी जायेगी। इस बात का निश्चय इस भाग द्वारा किया जा सकता है कि प्रधान न्यायालय को सलाह के निर्देशों पर समूचे न्यायालय द्वारा विचार करना पड़ेगा।

3. न्यायालय के अधीन अधिकार

12. सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 214 के अनुसार अपने कार्य को सुव्यवस्थित करने के लिये कार्य-पद्धति के नियम बनाने के अधिकार प्रधान न्यायालय को सौंप देने चाहियें तथा जाब्ता दीवानी (Civil Procedure Code) के हुक्म 45 में दिये हुये आदेशों के समान आदेश प्राप्त हो जाने चाहियें, जिससे कि प्रधान न्यायालय में अपीलों के रिकार्ड तैयार कराने तथा डिग्रियों के तामील

कराने में सुविधा हो। सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 209 द्वारा फेडरल कोर्ट पर लगाये गये प्रतिबन्ध को कायम रखना हम आवश्यक नहीं समझते हैं। यदि प्रधान न्यायालय प्रीवी कौंसिल का स्थान ग्रहण करता है तो उसे जहां सम्भव हो अन्तिम फैसला और डिग्री देने की आज्ञा होनी चाहिये अथवा जिन कचहरियों से अपील आई हो उनको उन मामलों पर और आगे जांच करने के लिये वापस भेजने की आज्ञा होनी चाहिये। यदि इस प्रकार की जांच आवश्यक समझी जाये। सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 210 के अनुसार प्रधान न्यायालय का कुछ अन्तर्वर्ती अधिकार देने के आदेश भी बनायें जायें।

4. न्यायालय का निर्माण तथा न्यायाधीश संस्था

13. हमारे विचार से प्रधान न्यायालय को दो विभागों की आवश्यकता होगी और प्रत्येक विभाग में 5 न्यायाधीश होने चाहियें। अत: न्यायालय को 10 न्यायाधीश और एक मुख्य न्यायाधीश की आवश्यकता होगी, जिससे कि अनुपस्थित अथवा अन्य अदृश्य परिस्थितियों की पूर्ति हो सके। साथ ही साथ इनमें से किसी एक न्यायाधीश की अपील के अधिकार सम्बन्धी आकस्मिक अनेक विविध मामलों पर विचार करने में आवश्यकता पड़ जाये जिनमें नजरसानी तथा हवाला सम्बन्धी अधिकार भी शामिल हैं।

5. न्यायाधीशों की नियुक्ति-विधि तथा योग्यता

14. प्रधान न्यायालय के न्यायाधीशों की योग्यता फेडरल कोर्ट के न्यायाधीशों के लिये सन् 1935 ई. के एक्ट के आदेशों में दी गई योग्यताओं के अनुरूप रखी जानी चाहिये। इस बात का ध्यान रखना चाहिये जैसा कि सन् 1935 ई. के एक्ट में है कि यूनियन-संघ में सम्मिलित रियासतों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश भी प्रधान न्यायालय में स्थान पाने के योग्य हों। हमारे विचार से प्रधान न्यायालय न्यायाधीशों की नियुक्ति का अधिकार यूनियन के सभापति के प्रतिबन्ध रहित अधिकार पर निर्भर करना उचित नहीं है। हम निम्न दो विधियों में से किसी एक को ग्रहण करने की सिफारिश करते हैं। एक विधि यह है कि सभापति, जहां तक कि प्यूनी न्यायाधीशों की नियुक्तियों का सम्बन्ध है, प्रधान न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की राय से किसी व्यक्ति को, जिसे वे प्रधान न्यायालय में नियुक्त होने के योग्य समझते हैं, नामजद करें और इस नामजदगी की पुष्टि वैधानिक इकाइयों की हाईकोर्ट के 11 मुख्य न्यायाधीशों की बनाई गई सूची में से कम से कम 7 मुख्य न्यायाधीशों द्वारा हो; इस सूची में कुछ सदस्य दोनों

केन्द्रीय व्यवस्थापक मण्डलों के सदस्य हों और कुछ यूनियन के कानून के अफसर हों। दूसरी विधि यह है कि 11 सदस्यों की सूची तीन व्यक्तियों की सिफारिश करे जिनमें से सभापति प्रधान न्यायाधीश की राय लेकर किसी एक को न्यायाधीश की नियुक्ति के लिये चुने। मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति के लिये भी इसी प्रणाली का अनुसरण किया जाये सिवाय इसके कि इस हालत में मुख्य न्यायाधीश की राय नहीं ली जायेगी। इस बात को सुनिश्चित बनाने के लिये कि सूची स्वंतत्र हो और उसे सबका विश्वास प्राप्त हो, वह तत्सम्बन्धी संस्था न हो वरन् किसी निर्धारित काल के लिये नियुक्त हो।

6. न्यायाधीशों की मुलाजमत की शर्तें तथा उनकी अवधि

15. प्रधान न्यायालय के न्यायाधीशों की नौकरी की अवधि वही होगी जो कि वर्तमान विधान-एक्ट के अन्तर्गत फेडरल कोर्ट के न्यायाधीशों की है और उनके पूर्णावकाश ग्रहण (Retirement) की आयु भी वही होगी, 65। उनका वेतन और पैन्शन स्थायी विधानाश्रित नियमों के अनुसार होगा। देश की सर्वोच्च अदालत में अस्थायी न्यायाधीश रखना अवांछनीय है। अस्थायी न्यायाधीशों के स्थान में प्रधान न्यायाधीशों अथवा हाईकोर्ट के न्यायाधीशों में से तत्सम्बंधी न्यायाधीश रखने की प्रणाली अपनायी जाये। इस सम्बन्ध में हम कनाडा की प्रथा की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं जो कि कनाडा की सर्वोच्च न्यायालय के विधान की 30वीं धारा के अन्तर्गत है। धारा निम्न प्रकार है:

''**30. तत्सम्बन्धी न्यायाधीशों की नियुक्ति:** यदि किसी समय न्यायालय के अधिवेशन को प्रचालित रखने अथवा आरम्भ करने के लिये प्रधान न्यायालय के न्यायाधीशों का कोरम उपलब्ध न हो, पद अथवा पदों के रिक्त हो जाने से या बीमारी के कारण अनुपस्थित हो जाने से या छुट्टी पर होने से या स्थायी विधान अथवा कौंसिल की आज्ञा द्वारा नियत किये गये अन्य कर्तव्यों के पालन करने से या न्यायाधीश अथवा न्यायाधीशों की अयोग्यता से, तो मुख्य न्यायाधीश अथवा उसकी अनुपस्थिति में प्यूनी न्यायाधीशों में से ज्येष्ठ प्यूनी जज तत्संबंधी न्यायाधीश की हैसियत से न्यायालय, उच्च न्यायालय की बैठकों में उपस्थित होने का लिखित निवेदन न्यायाधीशों से, उस अवधि के लिये जो आवश्यक, हो, कर सकता है; यदि उच्च न्यायालय (Exchequer Court) के न्यायाधीश ओटावा में न हों अथवा किसी कारणवश उपस्थित होने में असमर्थ हों तो प्रान्तीय उच्च न्यायालय के न्यायाधीश से उपस्थित होने का निवेदन कर सकता है, जिसे मुख्य न्यायाधीश द्वारा या मुख्य न्यायाधीश की अनुपस्थिति में स्थानापन्न मुख्य न्यायाधीश

द्वारा अथवा किसी ऐसी प्रान्तीय न्यायालय के ज्येष्ठ प्यूनी जज, जिससे ऐसा निवेदन लिखित रूप में किया गया हो, द्वारा लिखित निर्देश हो।

* * * *

4. **कर्त्तव्यः** जिस न्यायाधीश को इस प्रकार उपस्थित होने का निवेदन किया गया हो अथवा जिसको अपने पद के अन्य कर्तव्यों से इस प्रकार प्रमुखता देने के निर्देश दिये गये हों, उसका यह कर्तव्य होगा कि वह बैठकों में उस समय में और उस अवधि तक जिसके लिये उसकी उपस्थिति की आवश्यकता हो, उपस्थित हो और इस प्रकार उपस्थित रहते हुये वह प्रधान न्यायालय के प्यूनी जज की सत्ता और विशेष अधिकार प्राप्त करेगा और उसके कर्तव्य का पालन करेगा।''

16. विधान-एक्ट में हमारी सब सिफारिशों को स्थान देने की आवश्यकता नहीं है। मुख्य लक्षणों का विधान एक्ट में समावेश किया जाये और विस्तारपूर्वक व्यवस्थायें यूनियन व्यवस्थापक मण्डल द्वारा एक पृथक न्याय विभाग के एक्ट में पास की जायें। उदाहरणस्वरूप मौलिक अधिकारों को लागू करने की व्यवस्था भी न्याय विभाग के एक्ट में दी जाये। हम यह बता दें कि प्रधान न्यायालय के आदेश (Mandamus) हुक्म इम्तनाई (Prohibition) हुक्म मिसलतल्बी के विशेषाधिकार को सन् 1938 ई. के स्थायी विधान द्वारा इंग्लैण्ड में हटा दिया गया है, सम्बन्धित आज्ञाओं को स्थानापन्न कर दिया गया है और न्याय विभाग के प्रधान न्यायालय को अधिकार दे दिया गया है कि वह उन मामलों की, जिनमें कि इस प्रकार की आज्ञायें प्राप्त हों, कार्यप्रणाली को निर्धारित करने के न्यायालय सम्बन्धी नियम बनाये। [देखिये सन् 1938 ई. के न्याय के शासन प्रबन्ध (Administration of Justice) के 7-10, धारायें (विविध आदेश)।]

17. हम समझते हैं कि हमारे लिये प्रधान न्यायालय के अधिकार और निर्माण के वर्णन करने की ही विचारणीय बातें थीं। इसलिये हमने इकाइयों की हाईकोर्ट के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा है, यद्यपि प्रसंगवश प्रधान न्यायालय सम्बन्धी सुझावों में हमें इनका उल्लेख करना पड़ा है।

1. एस. वरदाचार्य।
2. ए. कृष्णास्वामी अय्यर।
3. बी. एल. मित्तर।
4. के. एम. मुन्शी।
5. बी. एन. राव।

नई दिल्ली, 21 मई, सन् 1947 ई.

परिशिष्ट 'ख'

मं.सी.ए./63/कान्स./47

भारतीय विधान-परिषद्

कौंसिल हाउस,

नई दिल्ली, 13 जुलाई सन् 1947 ई.

प्रेषक:

पं. जवाहरलाल नेहरू,

सभापति, संघ-विधान-समिति

सेवा में:

अध्यक्ष,

भारतीय विधान-परिषद्

श्रीमान्,

(1) विधान-परिषद् के 30 अप्रैल सन् 1947 ई. के प्रस्तावानुसार संघ-विधान सम्बंधी सिद्धान्तों पर रिपोर्ट तैयार करने के लिये आपने जो समिति नियुक्त की थी उसके सदस्यों की ओर से मैंने एक स्मृति-पत्र पेश किया था, जिसमें समिति की सिफारिशें दर्ज थीं।

(2) 12 जुलाई सन् 1947 ई. को उस समिति की फिर बैठक हुई और उक्त स्मृति-पत्र में कुछ परिवर्तन करने का निश्चय किया।

(3) समिति की राय में स्मृति-पत्र के क्लाज 3 में निम्नलिखित एक सबक्लाज जोड़ा जाना चाहिये, ताकि संघीय पार्लियामेंट किसी भी इकाई (unit) का नाम बदल सके:

''(ङ) किसी इकाई का नाम बदल सकती है।''

(4) समिति की यह राय है कि स्मृति-पत्र के भाग 4 के अध्याय 1 में, खण्ड 6 के उपखण्ड 2 में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाना चाहिये, जिससे कि यह बात स्पष्ट हो जाये कि अगर कौंसिल आफ स्टेट्स का एक सदस्य उप-राष्ट्रपति चुना गया तो वह कौंसिल आफ स्टेट्स में अपना स्थान रिक्त कर देगा।

'और अगर संघीय पार्लियामेंट का एक सदस्य उप-राष्ट्रपति चुना गया तो वह संघीय-पार्लियामेंट में अपना स्थान रिक्त कर देगा।''

(5) और फिर समिति की यह राय है कि भारतीय विधान सम्बन्धी स्मृति पत्र के भाग 10 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये।

भाग 10

विधान में संशोधन

विधान सम्बन्धी संशोधन संघ-पार्लियामेंट की किसी भी सभा में पेश किया जा सकता है और जब प्रस्तावित संशोधन, प्रत्येक सभा में, उस सभा के कुल सदस्यों के बहुमत द्वारा तथा उस सभा में उपस्थित और मत देने वाले दो तिहाई सदस्यों के बहुमत से स्वीकृत हो जाये, तो वह स्वीकृति के लिए राष्ट्रपति के सामने रखा जायेगा और उनकी स्वीकृति मिलने पर वह संशोधन प्रयोग में आयेगा:

परन्तु शर्त यह है कि यदि संशोधन विधान के किसी ऐसे आदेश के बारे में हो जो निम्नलिखित मसलों में से सभी या किसी एक मसले से सम्बन्ध रखता हो, अर्थात:–

(क) संघीय विधायी सूची में कोई परिवर्तन

(ख) संघ-पार्लियामेंट में इकाइयों का प्रतिनिधित्व तथा

(ग) सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार,

तो यह भी आवश्यक होगा कि वह संशोधन संघ की संभी इकाइयों का आबादी के बहुमत का प्रतिनिधित्व करने वाली इकाइयों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा अनुमोदित हो। इन इकाइयों में संघ में सम्मिलित रियासतों की एक तिहाई जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाली इकाइयां भी शामिल हैं।

व्याख्या: ''इकाई'' (unit) का इस खण्ड में वही अर्थ है जो भाग 4 के खंड 14 में है। जहां इकाई रियासती गुटों की है वहां यह प्रस्तावित संशोधन इकाई की व्यवस्थापिका द्वारा उस हालत में अनुमोदित समझा जायेगा, जबकि उस गुट की रियासतों की बहुसंख्यक व्यवस्थापिकाएं उसका अनुमोदन करें।

आपका

–जवाहरलाल नेहरू